प्राक्कथन

इन दिनों बार बार ऐसी घोषणाएं की जा रही है जिनसे भारत और विश्व को यह विश्वास हो जाए कि इस्लाम शांति का संदेश देने वाला मजहब है। ये घोषणाएं कुरआन का संदर्भ देकर की जा रही है। आजकल ऐसी घोषणाओं ने एक फैशन का रुप ले लिया है जबकि भारत और विश्व का अनुभव इनके बिल्कुल विपरीत है। जहां तक भारत का प्रश्न है भारत ने तो तथाकथित इस्लामी शांति को लगभग पिछ्ले एक हजार वर्षो से भुगता है और दुर्भाग्य यह है कि भारत को छद्‌म शांति को अभी भी भुगतना पड़ रहा है।

अपुष्ट सूचनाओं के अनुसार इस्लाम और कुरआन की पढ़ाई कराने वाले मदरसे भारत में लगभग अस्सी से नब्बे हजार की संख्या में है। इनमें कहने के लिए तालिबान तैयार किए जाते है। इस पुस्तक के देशभक्त तथा विद्वान लेखक ने बताया है कि तालिबान शब्द तालिब का बहुवचन है जिसका हिन्दी में अर्थ विद्यार्थी होता है अर्थात् विद्या अर्जन करने वाला। जहां तक भारत का प्रश्न है भारत में विद्या का अर्थ अंतरिक्ष के ज्ञान से लेकर अध्यात्म ज्ञान भौतिक ज्ञान आयुर्विज्ञान और ऐसे अनेक प्रकार के ज्ञान होते है किन्तु तालिबान सामान्यतः कुरआन के पाठक होते है। उन्हें कच्ची आयु में ही मदरसों में इस्लाम मजहब के प्रसार के तैयार किया जाता है।

लखनऊ से प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक पांयनियर के 14 अगस्त 1995 के अंक में केन्द्रीय सरकार के तत्कालीन नागर विमानन मंत्री श्री गुलाम नबी आजाद का जम्मू में दिया गया वक्तव्य छापा था जो निम्नलिखित हैः

''जमाते इस्लामी द्वारा चलाए जा रहे मदरसों ने कश्मीर घाटी के धर्मनिरपेक्ष ताने बाने को बहुत नुकसान पहुंचाया है। नौजवानों में कट्‌टरवाद को हवा दी है।..........घाटी के युवकों को बन्दूक संस्कृति से इन मदरसों द्वारा परिचय करा दिया गया है और वह हिंसा का प्रचार करते है।''

इस तथ्य को किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती कि मदरसों में कट्‌टर इस्लामी तालिबान तैयार होते है। मदरसा चाहे कहीं भी हो उसका लक्ष्य संपूर्ण भारत में सभवतः विश्व में उन देशों में जो इस्लाम नही है एक जैसा ही होता है अर्थात् उस देश को जो गैर इस्लामी है दारुल इस्लाम बनाना है। यह तथ्य भारतीयों को भली भांति लेना चाहिए।

इस पुस्तक के प्रकाशन का यही लक्ष्य है कि भारत ही बना रहे और इसे पढ़कर भारतीय अपनी कमर कस लें कि भारत को दारुल इस्लाम नहीं बननें देना है क्योंकि इस्लाम के अनुयायियों के अत्याचारों को जितना भारत ने भोगा है झेला है और उसका प्रतिकार किया है उतना कदाचित् कहीं नहीं हुआ है।

भारत की स्वाधीनता के पश्चात् भी विगत 55 वर्षो में भी भारतीयों ने कई दफा इसका स्वाद चखा है। यद्यपि भारत के कई स्वार्थी और कपटी पंथनिरपेक्ष राजनीतिबाजों और कम्युनिस्टों ने इन अत्याचारों पर पर्दा डालनें का पूरा पूरा प्रयत्न किया। किन्तु ऐसा लगता है कि भारत की नियति भारत को संभलने का अवसर देना चाहती है और इसलिए वह एक के पश्चात् दूसरी चेतावनी भारतीयों को अपने ढंग से दे रही है।

इस पुस्तक के विद्वान लेखक ने अनेक तथ्यपूर्ण घटनाओं के आधार पर और पूरे संदर्भ देकर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि इस्लाम का अर्थ शांति उसी समय तक है जब तक कि इस्लाम के अनुयायी किसी देश में 25-30 प्रतिशत से कम होते है और अधिक होते ही इसका भावार्थ ही बदल जाता है।

सांस्कृतिक गौरव संस्थान चूकि भारत के संविधान के अनुच्छेद 51 'क' में वर्णित भारत के नागरिकों के कर्तव्यों के प्रचार के लिए समर्पित संस्था है और प्रचार के साथ साथ इस उद्‌देश्य की पूर्ति के लिए संस्थान की ओर से अनेक प्रकार के व्यावहारिक उपाय भी किए जाते है इसीलिए आवश्यक लगता है कि उन ताकतों के कपटपूर्ण आचरण का खुलासा किया जाए जो देश में सन् 1947 को दोहराना चाहती है। इस पुस्तक में भारत के नागरिकों के कर्तव्य भी दिए है और संस्थान की योजनाओं का भी विवरण दिया गया है। विश्वास है कि प्रबुद्ध पाठकगण कमरकस कर देश की अखण्डता और एकता के लिए जुट जाएंगे।

विनीतः

डां. महेश चन्द्र

महामंत्री

सांस्कृतिक गौरव संस्थान

श्रीरामनवमी चैत्र शुक्ल 9,
संवत् 2059 विक्रम
21 अप्रैल, 2002

भूमिका

लाला लाजपतराय भारतीय मुस्लिम आन्दोलन 'खिलाफत' और 'स्वतंत्रता संग्राम' दोनों के ही विख्यात नेता थे। उन्हें भारत में ब्रिटिश राज्य से इतनी घृणा थी कि सन् 1921 में उन्होंने अपने एक भाषण में यह तक कह डाला कि **''किसी भी दूसरी कौम की गुलामी से हिन्दुओं को मुसलमानों की गुलामी करना श्रेयष्कर होगा''।** (पी. सी. बैमफोर्ड : हिस्ट्रीज आफ खिलाफत एंड नॉन कोआपरेशन मूवमैन्ट्स, पृ-29)

उनके इस कथन की उन हिन्दुओं में जो हिस्ट्री ऑफ रिलीजन के विख्यात लेखक बिल ड्यूरेन्ट की निम्नलिखित टिप्पणी से न केवल परिचित थे अपितु स्वयं इस्लाम धर्म के मूल ग्रन्थों, कुरान और हदीस और मुस्लिम इतिहास का गहन अध्ययन कर चुके थे खलबली मच गयी।

''**भारत में मुसलमानों की विजय कदाचित इतिहास की सर्वाधिक रक्त रंजित कहानी है। इस अत्यंत अरुचिकर कहानी का निष्कर्ष यही निकलता है कि किसी राष्ट्र की सभ्यता संस्कृति ऐसी नाजुक चीज है जिसका ताना बाना शंति और सुव्यवस्था बाहर से आकर हमला करने वाले या अपने अंदर ही पनपने वाले बर्बर आक्रमणकारियों द्वारा कभी भी नष्ट किया जा सकता है''। (बिल ड्यूरेन्ट)**

इन विद्वानों के आग्रह पर लाला लाजपतराय ने जो पर्याप्त अध्ययन के पश्चात ही निष्पक्ष राय बनाने में विश्वास करते थे छह मास तक सभी दूसरे कार्यो को छोड़कर कुरान हदीस और शरीयत का अध्ययन किया। इस अध्ययन से उनके होश उड़ गये। खिलाफत के मुस्लिम नेता इस्लाम का शान्तिमय, साम्प्रदायिक सद्भाव, विश्व बन्धुत्व का जो चेहरा उनके सामने प्रस्तुत करते रहे थे इस अध्ययन के पश्चात उनके सामने उभरे हुए इस्लाम के घोर साम्प्रदायिक क्रूर और गैर मुसलमानों के प्रति अपूर्व घृणायुक्त रुप से नितान्त भिन्न था। हिन्दू मुस्लिम एकता को अपना मुख्य हथियार बनाकर भारत को अंग्रेजो से स्वतंत्र कराने का स्वप्न देखने वाला यह पंजाब का शेर इस अध्ययन के पश्चात अपनी स्वाभाविक ओजस्विता और निर्भीकता के बावजूद इस्लाम द्वारा हिन्दुओं के अस्तित्व को नष्ट करने के संकल्प मात्र से विचलित हो गया। अपनी इस गहन चिन्ता से श्री सी. आर. दास को 1924 में पत्र लिखकर अवगत कराते हुए उन्होंने कहाः

''मैने गत छः मास मुस्लिम इतिहास और कानून (शरियत) का अध्ययन करने में लगाये। .... मै ईमानदारी से हिन्दू मुस्लिम एकता की आवश्यकता और वांछनीय में भी विश्वास करता हूं। मै मुस्लिम नेताओं पर पूरी तरह विश्वास करने को भी तैयार हूं। परन्तु कुरान और हदीस के आदेंशों का क्या होगा? उनका उल्लंघन तो मुस्लिम नेता भी नहीं कर सकतें। तो क्या हम नष्ट हो जायेंगे''।

यद्यपि लाजपत राय द्वारा उठाये गये इस प्रश्न को 75 वर्ष बीत गये है परन्तु इस दुविधा पूर्ण प्रश्न पर सहजता पूर्वक निष्पक्ष अध्ययन के पश्चात किसी भी विद्वान ने कुछ कहने की आवश्यकता नहीं समझी। आज भी इस्लाम के विषय में संसार के शीर्ष राजनेता हमारे लगभग सभी धर्माचार्य भारतीय राजनीतिक नेता और मीडिया के धुरन्दर विद्वान यही बता रहे है कि इस्लाम का अर्थ शान्ति है। कि वह विश्व बन्धुत्व, सर्वधर्म समभाव में विश्वास करता है। रक्तपात और हिंसा में विश्वास नहीं करता। भारतीय इतिहास में मुस्लिम आक्रमणकारियों सुल्तानों और बादशाहों द्वारा हिन्दुओं पर किये गये अवर्णनीय अत्याचारों को भी वह इनके कर्ताओं की बर्वरता स्वार्थपरता और धनलिप्सा का परिणाम बताकर इस प्रकार की क्रियाओं को इस्लाम के विरुद्ध होने पर बल देते रहे है।

उनके अनुसार सांप्रदायिक समस्या का सहज इलाज यह है कि भारतीय मुसलमान मुख्य धारा में मिल जांय जैसे अपने नाम गुलाम मोहम्मद के स्थान पर मोहम्मद दास इत्यादि रखने लगे। क्या कपड़े और नाम बदलने भर से मुसलमानों की मानसिकता का निर्माण करने वाली उनकी वह मूल धार्मिक मान्यताये बदल जायेंगी जिनकी जड़े गहराई

तक कुरान और हदीस में गई हुई है। जो उनके और मूर्ति पूजक हिन्दुओं के बीच एक गहरी घृणापूर्ण और कभी भी न लाघें जाने वालें खाई का काम करती है।

11 सितम्बर, 2001 को विश्व की सबसे बड़ी राजनीतिक शक्ति अमरीका के हृदय पर भयानक प्रहार के पश्चात् कुछ पश्चिमी विद्वानों ने (भारत में नहीं) इस आतंकवाद की धार्मिक जड़ों को तलाशने की आवश्यकता समझी और अमरीका और उसके सहयोगियों द्वारा आतंकवाद के विरुद्ध सम्पूर्ण युद्ध की घोषणा कर दी गयी।

इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि कुरान की मक्का में अवतरित कुछ आयतें आस्तिकता, गरीबों और गुलामों के प्रति उदारता व्यवसाय में ईमानदारी इत्यादि जैसे सर्वमान्य नैतिक सिद्धान्तों के शान्तिपूर्ण प्रचार पर बल देती है। परन्तु मौदूदी साहब और उनके जैसे अनेक शीर्षस्थ मुस्लिम विद्वानों और उनके मदरसों में शिक्षा प्राप्त तालिबानों का मत है कि इस्लाम जिन व्यापक सुधारों को लाना अपना दैवी दायित्व समझता है वह केवल प्रवचनों और प्रचार से सम्भव नहीं है। निहित स्वार्थो के अस्तित्व को उन सुधारों में जो खतरा दिखाई देता है उनको वह इतनी आसानी से कभी लानें नही देंगे। इसलिए मजबूर होकर मोमिन (मुसलमानों) को युद्ध करना पड़ता है जिससे सुधार के मार्ग में जो अवरोध है उन्हें बल पूर्वक उखाड़ फेंका जाय। उसके लिए सत्ता पर कब्जा करना आवश्यक है क्योंकि सत्ता की सहायता बिना इतिहास में कहीं भी और कभी भी तेजी से सुधार सम्भव नहीं हो सका है।

मदीने में पैगम्बर द्वारा अपनायें गये मार्ग की सफलता और मक्का की घोर असफलता निःसन्देह प्रमाणित करती है कि उनके द्वारा अपनायी गयी नीति के बिना उन्हें मदीने में जो चमत्कारिक सफलता प्राप्त हुई वह सम्भव नहीं होती।

इस्लाम के इन दो रुपों का निष्पक्ष मूल ग्रन्थों, इस्लामी और विदेशी विद्वानों द्वारा की गई व्याख्याओं के माध्यम से करना और उसकी सह परिपेक्ष्य में पाठकों के सामने प्रस्तुत करने का यह छोटा सा प्रयास है। आशा है कि इस महत्वपूर्ण विषय के अध्ययन की दिशा में यह लेख विद्वानों को प्रोत्साहित करेगा।

एक राष्ट्रवादी

1

बामियान (अफगानिस्तान) में 2000 वर्ष में पुरानी विशाल बुद्ध प्रतिमाओं को आधुनिक विस्फोटों से सरकारी तौर पर चमना चूर किये जाने की घटना को कुछ ही समय बीता था कि अमेरिका में वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर के दो 300 मीटर से ऊंचे टावरों और सेना मुख्यालय पर हुए विमान विस्फोटों में तालिबान का नाम फिर सुर्खियों में आ गया है। इस आक्रमण में 20000 से अधिक लोगों के मारे जाने की आशंका है। भारत तो पिछले 10 वर्ष से इन तालिबान के आतंक को काश्मीर में झेल रहा है।

विश्व के अधिकांश देशों की अपील को ठुकरा कर तालिबान ने इन जड़ मूर्तियों के प्रति कोई सहानुभूति नही दिखाई। उनका बार बार यही कहना है कि उनके इस्लाम मजहब की मांग है कि इन मूर्तियों का नामोनिशान इस्लामी देश अफगानिस्तान से मिटा दिया जाय।

इस घटना के तुरंत बाद ही तालिबान द्वारा अफगानिस्तान के हिंदू और सिक्ख नागरिकों और स्त्रियों पर कुछ ऐसे प्रतिबंध लगाये गये जिनकी सभी सभ्य संसार ने निंदा की। यहां भी यही दलील दी गई कि ऐसा करना इस्लामी शासक का धार्मिक कर्तव्य है।

अब अमेरिका अफगानिस्तान में अड्डा जमाये ओसामा बिन लादेन नामक अरग नागरिक की मांग तालिबान शासन से कर रहा है। उसे आतंकवाद का मुख्य अभियुक्त माना जा रहा है।

कौन है तालिबान ?

तालिबान शब्द तालिब का बहुवचन है। तालिब शब्द तालिबिल्म का संक्षिप्त रुप है जिसका अर्थ है इल्म का तालिब या इल्म का इच्छुक। हिन्दी शब्द विद्यार्थी तालिबिल्म का एकदम पर्यायवाची शब्द है। जिसका अर्थ है विद्या अर्जन करने का अभिलाषी। जब मजहब से यह शब्द जुड़ जाता है तो इसका सीमित अर्थ हो जाता है धार्मिक विद्या के अर्जन का अभिलाषी वह विद्यार्थी जिसने इस्लाम धर्म की शिक्षा इस्लाम के धर्मनिष्ठ मुसलमान विद्वानों (उलेमा) द्वारा चलाये जा रहे मदरसों में प्राप्त की हो। तालिबान शब्द ही यह प्रकट करता है कि यह लोग मदरसों में शिक्षित इस्लाम धर्म के उत्कृष्ट विद्वान है। यह अपनी पूरी शैशव और किशोरावस्था कुरान हदीस और शरियत के अध्ययन में लगा चुके है। तालिबान कच्ची आयु से ही अपने मदरसों में वर्षो तक इस्लाम धर्म के प्रसार करने वाले मुस्लिम आक्रमणकारियों शासकों को अपने धर्म के अनुेकरणीय महापुरुषों के रुप में देखतें आये है। उनके कृत्य और उनकी मानसिकता प्रशंसनीय धार्मिक कृत्यों के रुप में उनके मानस में रच और बस गई है। यह उनके आदर्श है क्योंकि इन लोगों के आदर्श पैगम्बर मोहम्मद साहब है जिन्होनें अपनी जन्म भूमि मक्का पर विजय प्राप्त होते ही अविलम्ब काबा मूर्ति मन्दिर में रखी अपने पूर्वजों द्वारा सहस्त्रों वर्षो से पूजी जा रही देवी देवताओं की 360 से ऊपर मूर्तियों को वहां से निकालकर ध्वस्त करवा दिया था और समस्त मक्का निवासियों को एक मास के अन्दर अन्दर मुसलमान बना लिया था। यह वही मंदिर था जिसमें उनके पूर्वज इससे पहले पूजा करते रहे थे और वह स्वयं भी उसमें उस समय नमाज पढ़ चुके थे और उसकी परिक्रमा कर चुके थे जब उसमें मूर्तियां स्थापित थी। हम बल देकर कहना चाहते है कि तालिबान इस्लाम धर्म की सर्वोच्च और अधिकारिक शिक्षा प्राप्त धर्मनिष्ठ मुसलमान है और ऐसा कोई भी मुसलमान जानबूझकर इस्लाम के विरुद्ध कोई कार्य नहीं करेगा।

फिर भी हम कुछ मुस्लिम विद्वानों और अधिकांश हिन्दू नेताओं और धर्माचार्यो को हिन्दूओं को यह विश्वास जोर शोर से दिलाने में लगे देखते है कि इस खून खराबें और धार्मिक स्थलों के विध्वंस की इजाजत इस्लाम नहीं देता और यह कार्य सदैव स्वार्थ और राजनीति से प्रेरित होते है।

मदरसे जहां तालिबान का निर्माण किया जाता है-

काश्मीर में भी पिछले 10-15 वर्षो से इस्लाम के नाम पर आतंकवादी यही खेल खेल रहे है। वहां के हिन्दुओ और सिक्खों के योजनाबद्ध कत्ले आम द्वारा काश्मीर घाटी उनसे लगभग खाली करा ली गयी है। यह आतंकवादी भी तालिबान ही है। पाकिस्तान अफगानिस्तान काश्मीर और भारत में मुस्लिम बच्चों की धार्मिक शिक्षा के लिए चलाये जाने

वाले मदरसों से पढ़े लिखे नवयुवक। मजे की बात यह है कि यह मदरसे इन सभी देशों के शासकों की सहमति और अर्थिक सहायता से चलाये जा रहे है जबकि. विश्व के सभी देश आतंकवाद के विरुद्ध शोर मचा रहे है।

हम अपने बयान की पुष्टि में दैनिक जागरण लखनऊ दिनांक 10.01.2000 में छापे जनाब जफर आगा के लेख का निम्न उदाहरण पेश करते है-

चूंकि तालिबान को उन कट्टरपंथी मदरसों में शिक्षा मिली थी जो जिहाद के माध्यम से सारे संसार में इस्लामी पताका का पाठ पढ़ाते है अतः पाकिस्तान का काम आसान हो गया। पाकिस्तान एवं तालिबान में विचारधारा के स्तर पर समानता थी ही इसलिए आई. एस. आई. के उस समय के प्रमुख जनरल हामिद गुल तालिबान को फौजी प्रशिक्षण देने में जुट गये। इस प्रकार पाकिस्तान की छत्रछाया में कट्टर इस्लामी विचारधारा में डूबी एवं फौजी प्रशिक्षण प्राप्त एक अफगान सेना तैयार हो गई।

लखनऊ के हिन्दुस्तान टाइम्स दिनांक 19 सितम्बर 2001 को कैकार्थी द्वारा लिखे लेख से पता चलता है कि पाकिस्तान के मुख्य मुख्य नेताओं ने शिक्षा प्राप्त की है। लश्करे के प्रमुख हाफिज शहीद जो कश्मीर में सहस्त्रों भारतीय सैनिकों की मौत के लिए जिम्मेदार है और पाकिस्तान की आई. एस. आई. खुफिया एजेंसी के पूर्व प्रमुख हामिद गुल इन्ही के मदरसे की देन है।

इन्ही मौलाना का मदरसा दारुल उलूम हक्कानी जो कि उत्तरी पश्चिमी सीमा प्रान्त में जी. टी. रोड पर स्थित है और अफगानिस्तान की सीमा से लगा हुआ है तालिबानी आतंकवाद का जन्म स्थान है। इस मदरसे के कुछ सर्वश्रेष्ठ विद्यार्थी अब तालिबान शासन में उच्चाधिकारी है जिनमें इस आन्दोलन के प्रथम मिनिस्टर खैरुल खैरख्वाह और मजहबी पुलिस के प्रथम प्रमुख कलामुद्दीन भी है। यह मदरसा भारत के देववन्दी स्कूल की विचारधारा से और सऊद अरेबिया के अतिवादी वहाबिज्म से बहुत प्रभावित है।

पायनियर लखनऊ दिनांक 14 अगस्त 1995 को कांग्रेस सरकार के तत्कालीन उड्यन मंत्री जनाब गुलाम नबी आजाद साहब का जम्मू में दिया गया एक बयान छापा था। उसमें उन्होंने कहा था जमाते इस्लामी द्वारा चलाये जा रहे मदरसों ने काश्मीर घाटी के धर्मनिरपेक्ष ताने को बहुत नुकसान पहुंचाया है। नौजानों में कट्टरवाद को हवा दी है।.......... घाटी के युवको का बन्दूक की संस्कृति से इन मदरसों द्वारा परिचय करा दिया गया है और वह हिंसा का प्रचार करते है।

मंत्री जी ने केवल जमाते इस्लामी द्वारा चलाये गये मदरसों पर ही आरोप लगाया है इसका कारण यह लगता है कि मुसलमानों की दूसरी संगठित देवबंद जैसे धार्मिक मदरसे चलाने वाली पार्टी जमातुल उलेमा सदैव कांग्रेस के साथ रही है। देव बंदी मदरसे के सर्वे सर्वा मदनी साहब सदैव कांग्रेस के वरिष्ठ मुस्लिम नेता रहते आये है। किन्तु वास्तव में मदरसे भले ही वह किसी भी राजनीतिक विचारधारा से जुड़े लोगों द्वारा क्यों न चलाये जा रहे हों उनमें धार्मिक शिक्षा के विषय में सदैव एक सा ही दृष्टिकोण होता है। मुशीरुल हक साहब अपनी पुस्तक इस्लाम इन सेक्युलर इण्डिया में पृष्ठ 29 पर कहते है कि एक और दूसरे मदरसे में पाठ्य कार्यक्रम और मठनीय विषय पढ़ानें के तरीके शास्त्रीय ज्ञान विज्ञान और धार्मिक प्रशिक्षण में कोई खास भेद नहीं है। ...... सभी मदरसों में शिक्षा का माध्यम उर्दू होता है......और इस शिक्षा का ध्येय तालिबान को विशेष रुप से इस्लाम का विस्तार करने के लिए प्रशिक्षित करना होता है।

इन मदरसों में तालिबान को दूसरे मत मतान्तरों की पुस्तकों अथवा इस्लाम के अतिरिक्त दूसरा साहित्य पढ़ने से दूर रखा जाता है। पूर्ण मस्तिष्क परिशोधन के लिए यह आवश्यक है। लखनऊ के विश्वविख्यात नदवा मदरसें के रेक्टर इस्लामी विश्व में अपनी धार्मिक विद्वता के लिए प्रसिद्ध अलीमियां साहब अपने विद्यार्थियों को सम्बोधित करतें हुए कहते है। कि आपकी मेज पब्लिक पुस्तकालय की मेज नहीं है। यह मदरसे की मेज है...........हमारी पुस्तकों की अलमारियों में कोई भी ऐसी पुस्तक नहीं मिलनी चाहिए जिसके पढ़ने से मानव मस्तिष्क सप्ताहों तक आन्दोलित होता रहे और हमारे उन विश्वासों में भ्रम पैदा कर दे जो हमारे मदरसों की नीव के पत्थर है।

उपरोक्त वर्णन से हमारा आशय यह सिद्ध करने का हे कि तालिबान केवल जमाते इस्लामी द्वारा चलाये जाने वाले मदरसों के नही अपितु सभी मुस्लिम संस्थाओं द्वारा चलाये जाने वाले मदरसों की देन है। उनकी धार्मिक शिक्षा और मानसिकता एक जैसी ही है। वह अशिक्षित हैवान नहीं है। वह इस्लाम धर्म का वर्षो तक गहन अध्ययन किए हुए लोग है और उन्होंने वर्षो तक धर्मनिष्ठ परम विद्वान मुस्लिम धर्माचार्यो (उलेमा) के चरणों में बैठकर इस्लाम की शिक्षा प्राप्त की है।

अपनी इस गहन धर्म शिक्षा के कारण यही लोग पूरे मुस्लिम समाज का पथ प्रदर्शन करने के अधिकारी है। इनके अतिरिक्त कितना ही बड़ा अरबी का विद्वान यदि उसने मदरसों में वांछित शिक्षा प्राप्त नही की है यह बताने का

अधिकारी नहीं है कि कौन सा कृत्य इस्लाम के अनुकूल है और कौन सा इस्लाम के विरुद्ध है। ऐसे इस्लाम के अधिकारी विद्वानों द्वारा इस्लाम के विरुद्ध कार्यो को इस्लाम के नाम पर करने की आशा कैसे की जा सकती है जबकि कुरान में सच्चे मुसलमानों को वर्जित कार्य कभी भी न करने के सख्त आदेश दिये गये है?

किसी भी जीवित प्राणी को अपने जीवन से प्यारी कोई वस्तु नहीं होती। राज्य सिंहासन भी नहीं। जो तालिबान मानव बम बनाकर अथवा राइफल उठाकर किसी शासन की आधुनिक सेवाओ से टक्कर लेकर अपने ध्येय को पूरा करने के लिए निकलते है वह निश्चय ही किसी वैयक्तिक स्वार्थ से प्रेरित नहीं हो सकते। इस प्रकार मृत्यु को चुनौती देने वाला साहस इस्लाम के प्रति गहराई तक पैठी हुई आस्था का फल है इसमें किसी को क्या शक हो सकता है। आगे चलकर हम देखेंगे कि इसी आस्था के कारण मुट्ठी भर मुस्लिम सेनाओं ने अपने से तीन गुनों सेनाओं से टक्कर लेकर विजय प्राप्त की है।

बामियान की घटना से पहले भी भारत में इस्लाम के नाम पर हिन्दुओ पर मुस्लिम आक्रमणकारियों में भी और इस्लामी राज्य स्थापित हो जाने के बाद शान्ति काल में भी। (अब अमेरिका में किये गये भीषण विस्फोटों के दुःसाहस पूर्ण कार्य को अंजाम देने वाले भी तालिबान और ओसामा बिन लादेन ही बताये जा रहे है। ऐसा प्रचार किया जा रहा है कि औसामा बिन लादेन और कुछ सौ अथवा सहस्त्र आतंकवादियों के बध द्वारा संसार से इस्लामिक आतंकवाद का नामोनिशान मिटा दिया जायगा। कहा जा रहा है कि तालिबान में यह कृत्य इस्लाम वर्जित है। इस्लाम का तो अर्थ ही शांति है और इस्लाम निर्दोष लोगों की हत्या को पूर्ण मानवता की हत्या मानता है।

इन आक्रमणकारियों शासकों के इस प्रकार के कृत्यों को भी कहा जाता है कि यह इस्लाम विरुद्ध थे। इनका कारण था इन लोगों की धनलिप्सा और लूट इत्यादि का लोभ। यह कोरा झूठ है। इनमें से मात्र दो उदाहरण यह सिद्ध करने का पर्याप्त होंगे कि यह आक्रमणकारियों शासक भी धर्मनिष्ठ और विद्वानों मुसलमान थे और उन्होंने जो भी किया वह इस्लाम के अनुसार अनिवार्य कर्तव्य समझकर किया।

महमूद गजनवी ने कदाचित अपने आक्रमणों और शासन काल में अपने राज्य में कोई भी मंदिर ध्वस्त करने से नहीं छोड़ा। उस समय के विख्यात मंदिर सोमनाथ की उपास्य मूर्ति को तोड़ने से पहले पुजारियों ने उससे प्रार्थना की थी कि वह वेशक मंदिर में संचित असीम संपत्ति को उठा ले जाय परन्तु उनकी उपास्य मूर्ति को न तोड़े। महमूद ने जो उत्तर दिया उससे उसकी इस्लाम धर्म के प्रति प्रतिबद्धता का सही अंदाजा लगता है। उसने कहाः मै किसी दशा में भी इस बुत तोड़ने से नहीं छोडूगां। मै नहीं चाहता कि इतिहास मुझे महमूद बुत शिकन (मूर्ति भंजक) ने कहकर महमूद बुत फरोश (मूर्ति विक्रेता) के नाम से याद करे।

क्या महमूद एक गंवार धर्मान्ध व्यक्ति था प्रो0 फजल अहमद मुस्लिम बच्चों के लिये लिखी गई पुस्तक श्रंखला हीरोज आंफ इस्लाम (प्रकाशक नाज कम्पनी 3151 तुक्र मान गेट दिल्ली) में इस श्रंखला को लिखने का उद्देश्य मुस्लिम बच्चों को इस्लाम के कुछ महापुरुषों की अनुकरणीय जीवनी से परिचित कराना बताते है।

इस श्रंखला की पुस्तक महमूद गजनवी में उसकी शिक्षा के विषय में वह लिखते हे कि उसका पिता सुबुक्तीन जब सिंहासन पर बैठा तो महमूद केवल 6 वर्ष का था। वह सिंहासन पर बैठने से पहले भी एक अतिशक्तिशाली और समृद्ध सरदार था। अपने पुत्र को बढ़िया से बढ़िया शिक्षा दिलाने में उसने अपनी पूर्ण शक्ति लगा दी थी। उस समय के विख्यात विद्वानों द्वारा उसकी शिक्षा का प्रबन्ध किया गया। शीघ्र ही उसने कुरान कंठस्थ कर लिया। इसके पश्चात उसने सभी धार्मिक साहित्य का गूढ़ अध्ययन कर डाला।

ऐसे महमूद गजनवी को गंवार कहना उसके साथ अन्याय करना है। उसने जो भी किया वह इस्लाम धर्म के अनुसार उसका अनिवार्य धार्मिक कर्तव्य था। वह धर्मनिष्ठ मुसलमान था।

मुस्लिम शासकों में औरंगजेब से अधिक धर्मनिष्ठ और इस्लाम धर्म का विद्वान कोई बादशाह नहीं हुआ। अपने जीवन काल में ही वह आलमगीर जिन्दा पीर के नाम से जाना जाने लगा था। उसने मूर्तियों और मंदिरों के तोड़ने के लिए अलग विभाग ही बना दिया था। जिसके अधिकारी हर महीने अपने अपने सूबों में तोड़े गये मंदिरों की सूची उसको भेजते थे। उसने हिन्दुओं पर अपमानजनक जिजिया फिर से लगाया जो अकबर के समय से बन्द कर दिया गया था। होली दिवाली जैसे हिन्दू त्योहारों और भजन कीर्तन (संगीत) पर भी उसने प्रतिबंध लगा दिया था। इसके अतिरिक्त सरकारी नौकरियों में मुसलमानों को वरीयता देकर और हिन्दु व्यापारियों पर मुसलमान व्यापारियों पर मुसलमान व्यापारियों की अपेक्षा अधिक टैक्स लगाकर हिन्दुओं पर जजिया कर लगाकर भी उसने बड़ी संख्या में हिन्दुओं को इस्लाम धर्म स्वीकार

करने को मजबूर कर दिया। कदाचित यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि आज जब विश्व के बीस से अधिक देशों में शासक मुस्लिम है औरंगजेब का शासन इन सभी शासनों से अधिक इस्लामिक था।

क्या औरंगजेब जैसे विद्वान शासक को जो कुरान की प्रतियां बनाकर और टोपियां सीकर अपना वैयक्तिक खर्च चलाता था हम उसके द्वारा हिन्दुओं पर किये गये अत्याचारों को गैर इस्लामी और धन लिप्सा से प्रेरित कह सकते है? नही।

फिर यदि यह मान लिया जाय कि यह अत्याचार केवल लूट के लिये थे और इनसे दूर दूर तक मजहब का कोई वास्ता न था तो मंदिरों को धन के लिए ध्वस्त करते समय उनमें गाय काट कर अपवित्र क्यों किया जाता था विख्यात मंदिरो को तोड़कर उनके स्थान पर ही मस्जिद क्यों बनायी जाती थी उन्हें कुव्वतुल इस्लाम (इस्लाम की ताकत का प्रतीक) क्यों कहा जाता था ?मूर्तियों को तोड़कर उनको सैकड़ों मील दूर ले जाकर मक्का मदीना गजनी इत्यादि देशों में अथवा भारत में भी उन्हें मस्जिद की सीढ़ियों और बाजारों के चौराहों पर बिछाने का प्रदर्शन करने की क्या आवश्यकता थी उनके टुकड़ों को मांस बेचने के बांट बनाकर कसाइयों को क्यों दिया जाता था पाठशालाएं और पुस्तकालय जलाने का क्या औचित्य था और जो लोग इस्लाम स्वीकार करने से इन्कार कर देते थे उन्हें और उनकी स्त्रियों बच्चों को गुलाम बनाकर क्यों नीलाम किया जाता था छोटे हिन्दू बच्चों को पकड़कर वधिया क्यों किया जाता था कत्ल किये गये हिन्दुओं की खोपड़ियों से सैकड़ो मीनार क्यों बनाये जाते थे मुसलमान न बनने वाले लोगों पर अपमानजनक जजिया क्यों लगाया जाता था उन पर टैक्स मुसलमानों से अधिक क्यों लगाया जाता था ?उनके दीवाली जैसे सौम्य त्योहारों को प्रतिबन्धित क्यों किया जाता था ?

नहीं। महमूद गजनवी बाबर औरंगजेब टीपू सुल्तान इत्यादि जैसे इस्लाम के विद्वान शासकों द्वारा धन और सत्ता के लोभ से इन इस्लाम विरुद्ध कृत्यों के करने की अपेक्षा स्वप्न में भी नहीं की जा सकती। वास्तविकता यही है कि विश्व में इस्लाम का वर्चस्व और शरियत शासन स्थापित करने की दृष्टि से यह सब किया गया और आज भी पाकिस्तान बांग्लादेश और काश्मीर में जो हो रहा है इसी उद्देश्य से किया जा रहा है। और इसी कारण यह लोग मुसलमानों द्वारा इस्लाम के ऐतिहासिक महापुरुषों में गिने जाते रहे है।

यह तथ्य स्वीकार किया जा चुका है कि हिन्दुस्तान का 1947 ई0 का विभाजन इसी मुद्दे पर हुआ था कि मुसलमान एक अलग राष्ट्र है जिसकी बुनियाद कुरान हदीस और शरियत कानून के ईश्वरीय आदेशों पर रखी है। इस मजहबी विभाजन में जो लोग मारे गये और अपने घरों से उजाड़े गये उनकी संख्या 20 वीं शताब्दी में लड़े गये दोनो विश्व युद्धों में मारे गये और उजड़े हुए लोगों से अधिक थी। कितनी ही स्त्रियां बलात्कार का शिकार बनी अथवा जबरदस्ती उठा ली गई। सहस्त्रों बच्चें अनाथ हो गये। परिवार टूट गये।

किन्तु इस्लाम की मांग पूरी नहीं हुई। मुस्लिम बहुल काश्मीर को लेकर भारत पाकिस्तान में साढ़े तीन भारत पाकिस्तानी युद्ध हो चुके है। हम कारगिल को भी अथवा युद्ध मान रहे है। मुस्लिम आतंकवादियों ने जिनमें काश्मीरी पाकिस्तानी और अफगानी तालिबान मुख्य भूमिका निभा रहे है काश्मीर घाटी से हिन्दू और सिक्खों को मार भगाया हैं जो शेष रह गये है उनकी प्रतिदिन हत्याये हो रही है। इन आतंकवादियों का भी यही कहना है कि वह जो कुछ कर रहे है वहां करना इस्लाम के प्रति उनकी धार्मिक बाध्यता का परिणाम है।

इस वास्तविकता से मुंह नहीं छिपाया जा सकता कि मूर्तियों मूर्ति मंदिरो मूर्ति पूजा की शिक्षा देने वाले शिक्षकों और पाठशालाओं को समूल नष्ट करना इस्लाम और उसके अनुयाइयों का प्रथम धार्मिक कर्तव्य है। दूसरा कर्तव्य है अपनी नागरिकता के अनुसार अपने अपने देशों में इस्लामी राज्य स्थापित करने के लिए अपने तन मन को समर्पित कर देना। अमेरिका ग्रेट ब्रिटेन और इजराइल वह विश्व शक्तियां है जो इस्लाम के प्रचार प्रसार और विश्व में इस्लाम का वर्चस्व और इस्लामी शासन स्थापित करने के मार्ग में सबसे बड़ी बाधायें है। इसलिये तालिबान ने उनके विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया है।

बामियान की घटना के आस पास ही मौ. बहीदुद्दीन खां साहब की एक पुस्तक प्रकाशित हुई है इस्लाम एंड पीस (इस्लाम और शान्ति)। यह इस प्रकार का पहला प्रयास नहीं है। खां साहब भाजपा की केन्द्रीय सरकार द्वारा सम्मानित मुस्लिम विद्वान है। इससे पहले क्योटा (जापान) में पाकिस्तान के मशहूर राजनीतिज्ञ सर जफरुल्लाह खां ने एक अंतर्देशीय सभा में बोलते हुये कुरान की कुछ आयतों के हवाले से अपने श्रोताओं को इस्लाम को एक शांति और सुलह का धर्म मानने के लिये प्रभावशाली भाषण दिया था। अमेरिका और उसके साथी देश कह रहे है कि उनका युद्ध आतंकवाद के विरुद्ध है उसको शरण देने वाले तालिबान शासन के विरुद्ध है। इस्लाम के विरुद्ध नही।

मौ0 वहीदुद्दीन साहब ने भी कुरान की अनेक आयतों और मोहम्मद साहब के जीवन की कुछ उक्तियों (हदीशों) का उद्धारण देकर इस्लाम को शांतिवादी अहिंसा और मानवतावाद का हिमायती और संसार में सर्वोत्कृष्ट धर्म सिद्ध करने का प्रयास किया है।

भारत के कोने कोने से प्रकाशित अंग्रेजी समाचार पत्र पत्रिकाओं में भी इस्लाम के इसी शांतिमय मानवतावादी रुप पर वहीदुद्दीन खां साहब जकरिया साहब असगर अली इंजीनियर इत्यादि विद्धानों के लंबे लेख छपते रहते है।

इन परिस्थितियों ने फिर इस प्रश्न की विश्व के सामने लाकर खड़ा कर दिया है किः

क्या वास्तव में भूतकाल में आक्रमणकारियों और शासकों द्वारा हिन्दूओं पर किये गये अत्याचार और वर्तमान में तालिबान और मुस्लिम आतंकवादियों द्वारा की जा रही (आज के सभ्य मानव समाज की दृष्टि में) अमानवीय हिंसात्मक और आतंकवादी कार्यवाही इस्लाम धर्म की शिक्षाओं के अनुकूल है?

अथवा

उसके विपरीत जैसा कि मौ0 वहीदुद्दीन खां जकरिया साहब और असगर अली इंजीनियर साहब इत्यादि मुस्लिम महानुभावों और गांधी जी और दूसरे अनेक हिन्दू नेता हमें समझाते आये है इस्लाम तो शान्ति अहिंसा मानव बन्धुत्व का ही समर्थक है और यही वास्तविक स्वरुप है? कि यह हिंसात्मक क्रूर अमानवीय कार्य इस्लाम की मान्यताओं के विरुद्ध है और वैयक्तिक स्वार्थो अथवा राजनीतिक आकांक्षाओं से प्रेरित है? और क्या कुछ आतंकवादियों और उनके अड्डों को नष्ट कर देने मात्र से आतंकवाद को समाप्त किया जा सकता है?

क्या वहीदुद्दीन खां साहब जकरिया और असगर अली इंजीनियर साहब जैसे अनेक विद्वानों को जो इस्लाम को शान्ति अहिंसा और सहनशीलता का धर्म प्रचरित करते है झूठा माना जाय? नही। वास्तविकता यह है कि इस्लाम ये दोनों ही है।

इस विसंगति के मूल कारण को समझना हिन्दुओं को गैर इस्लामी विश्व को अपने अस्तित्व की रक्षा करने के लिये अत्यावश्यक है। अगले पन्नों में हम इस गुत्थी को सुलझाने का प्रयास करेंगे।

2

इस्लामी मजहब को पूर्ण विकसित होने में अपने जन्म से केवल 23 वर्ष लगे। इनमें प्रथम 13 वर्ष मोहम्मद साहब के जन्म स्थान मक्का निवस के है। और अन्तिम 10 वर्ष उनके मदीना निवास के है। जहां जाकर वह मक्का निवासियों द्वारा किये गये अत्याचारों और अपने जीवन के लगातार खतरे से परेशान होकर बस गये थे। छुप छुपाकर मक्का से मदीना जाने की तिथि इस्लाम के इतिहास में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना है इसलिए मुसलमान अपना कैलेण्डर (तिथि क्रम) इसी घटना के दिन से प्रारम्भ करते है। इस तिथि क्रम को हिजरी कहा जाता है।

हमारे विषय के लिए भी यह तिथि अति महत्वपूर्ण है। जैसा हम आगे चलकर बतायेंगे इस्लाम के इतिहास में यह तिथि वाटर शेड है। इस तिथि से पहले मोहम्मद साहब मक्का में एक प्रताड़ित अपमानित सिरफिरे व्यक्ति के रुप में देखे जाते थे। इस तिथि के शीघ्र पश्चात मदीना में उनका स्वागत एक ऐसे व्यक्ति के रुप में हुआ जो हर समय फरिश्तों द्वारा अल्लाह के सम्पर्क में था। जिसे अल्लाह ने पृथ्वी पर एक विशेष कार्य के लिए अपना संदेशवाहक (रसूल पैगम्बर) बनाकर भेजा था। यह विशेष कार्य था सभी दूसरे धर्मो को समूल नष्ट कर इस्लाम धर्म और सभी मानव निर्मित कायदे कानून (संविधानों) के स्थान पर अल्लाह के कानून (शरियत) द्वारा शासनतंत्र की स्थापना करना।

केवल 23 वर्ष के अन्दर यह मजहब एक ऐसे अपमानित प्रताड़ित और सताये हुए व्यक्ति के वैयक्तिक विश्वास से बढ़कर जिसको अपनी जान बचाने के लिए अपनी मातृ भूमि को छोड़कर जाना पड़ा था पूरे अरब देश पर छा गया। इसके सभी विरोधी वहां से भगा दिये गये अथवा कत्ल कर दिये गये। ग्रीक रोमन मिस्त्र और परशियन जैसे ताकतवार साम्राज्यों के सम्राटों को इस्लाम स्वीकार करने के लिए पत्र भेज दिये गये। इस 23 वर्ष के सफर में इस्लाम ने बहुत सी मंजिले तय कीं। अनेक ऊंची नीची स्थितियों में से गुजरा। इस सफर की कहानी इस्लामी धर्मग्रन्थों दर्शन हदीस और इस्लामी इतिहास में सुरक्षित है। और गैर परिस्थितियों का सामना समय समय पर भिन्न भिन्न देशों में इस्लाम को करना पड़ता रहता है।

कुफ्र के समुद्र में पैदा होकर किस प्रकार एक साधारण अशिक्षित व्यक्ति ने इस्लाम को इस मिसाल है। उसकी कार्यशैली कदम कदम पर कुर्बानी देकर और समय समय पर उपलब्ध साधनों का कुशलतापूर्वक उपयोग कर अपने गन्तव्य को प्राप्त करने के लिए उत्साहित करती है। वह गन्तव्य है प्रत्येक मुस्लिम को तन मन धन से इसका प्रयास करना है कि वह जिस देश में भी रहता हो वहां इस्लाम धर्म का सभी दूसरे धर्मो पर वर्चस्व और शरियत शासन स्थापित हो जाय। इस ध्येय को प्राप्त करने की विधियों में उपदेश और प्रचार भी है गुप्त धर्मान्तरण भी है निमन्त्रण भी है मान मुनव्वन भी है छल कपट भी है लोभ भी है और धमकी भी। और अन्त में कत्ल भी यदि और किसी प्रकार ध्येय प्राप्ति की आशा न हो और अवसर भी अनुकूल हों।

मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि मक्का काल में विकसिल हुआ इस्लाम धर्म सीधा सीधा सुधार प्रचार है। इसमें टकराव से बचा गया है। नैतिक मूल्यों को सुधार का आधार बनाया बया है। लोगों से सुधरने की अपील की गयी है। उन्हें शुभ कर्मो के करने की प्रेरणा दी गयी है। और अशुभ कर्मो के करने से होने वाली हानियों को बताया गया है। कुरान को तौरेत और बाइबिल की भांति ईश्वरीय समाचार और मोहम्मद साहब को मूसा और ईसा की भांति अल्लाह का पैगम्बर मानने के लिए विविध प्रकार के तक्र और इतिहासा के प्रमाण दिये गये है। फिर भी 13 वर्ष के मक्का काल में मोहम्मद साहब अपने धनिष्ट मित्रों नातेदारों और गुलामों को मिलाकर केवल 100-150 लोगों की मुसलमान बना पायें इनमें भी अंत के तीन वर्षो में एक भी व्यक्ति मुसलमान नहीं बना।

मदीना पहुचने के बाद इस स्थिति में तेजी से परिवर्तन आया। जहां मक्का में मोहम्मद साहब को सब प्रकार की मानसिक और शारीरिक यातनायें दी जा रही थी अपमानित किया जा रहा था और उनकी जान के लाले पड़े हुए थे मदीना में उनका स्वागत एक महापुरुष और अल्लाह के पैगम्बर के रुप में हुआ। मदीना में कुछ लोग ऐसे थे जो हज के समय मक्का जाने के अवसरों पर मोहम्मद साहब के प्रचार से प्रभावित होकर उन्हें पैगम्बर मान चुके थे। मदीना में

मक्का से भी अनेक मुसलमान आकर बस गये थे। इन सभी मुसलमानों के लिए मोहम्मद साहब न केवल एक धार्मिक नेता थे अपितु यह लोग उनसे अपने दैनिक कार्यो और परेशानियों का भी समाधान खोजते थे। इस तरह मोहम्मद साहब मदीना में एक शासक के रुप में भी उभरे। अपनी मृत्यु के समय वह अल्लाह के रसूल और उसके विशेष कृपा पात्र होने के कारण न केवल पूरे अरब देश के मुसलमानों के सर्वोच्च धार्मिक नेता थे अपितु उस राज्य के एक छत्र शहंशाह भी थे जिसकी राजधानी उनके द्वारा मदीना में बनाई गई थी।

जहां मक्का काल में 13 वर्षो के कठोर प्रयास के बावजूद मोहम्मद साहब अपने मित्रों नातोरों और गुलामों को मिलाकर केवल 100-150 मुसलमान बना पाये मदीना निवास के केवल 10 वर्ष में पूरा अरेबिया मुसलमान हो गया। उनकी मृत्यु के 100 वर्ष के अन्दर अन्दर पूरा मध्य एशिया उत्तरी अफ्रीका और यूरोप के कुछ भाग भी मुसलमान हो गये। अगले पृष्ठों को पढ़ने के पश्चात पाठक स्वयं निर्णय कर सकते है कि मदीना काल के 10 वर्षो में इस्लाम का यह अपूर्व विस्तार मक्का काल जैसे शान्ति पूर्वक प्रवचनों द्वारा हुआ अथवा इसके कारण लोभ भय आतंक और अंधविश्वास भी थे।

मक्का काल में इस्लाम -

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि इस्लाम का मक्का काल उसका शान्तिमय प्रेममय और समझौता परक अहिंसात्मक रुप है। यद्यपि ध्येय (मूर्ति पूजा खण्डन इस्लाम की वर्चस्वता और इस्लामी राज्य की स्थापना) में और अपने पैगम्बर स्वीकार कराने के मुख्य ध्येय में किसी भी काल में अन्तर नहीं आया परन्तु मक्का काल में इस ध्येय की प्राप्ति के लिए नसीहत परामर्श, फहमायश (उपदेश चेतावनी), तरगीब (प्रेरणा प्रलोभन), तबलीग (प्रचार) को ही माध्यम बनाया गया। कारण स्पष्ट है अभी तक मोहम्मद साहब के अनुयाइयों की संख्याद 100-150 से अधिक नहीं थी। इनमें से भी अनेक स्थानीय लोग परेशान होकर ईसाइ देश अबीसीनिया में जा बसे थे। मोहम्मद साहब के हाथ मं इतनी शक्ति नहीं थी कि वह इन सुधारों को बलपूर्वक लागू कर सके। इसलिए इस काल में उतरी आयतें इसी मार्ग की ओर इशारा करती है।

1. सब प्रशंशा अल्लाह के लिए है जो सारे संसार का रब (पालनकर्ता प्रभु शासक) है।
2. अत्यन्त कृपाशील और दयावान है।
3. उस दिन का मालिक है जिस दिन बदला दिया जायेगा। (अर्थात् मौत के आद न्याय का दिन कयामत)
4. हे प्रभु। हम तेरी ही उपासना करते है और तुझी से सहायता चाहते है।
5. हमें सीधा मार्ग दिखा
6. उन लोगो का मार्ग जिन पर तूने कृपा की
7. न कि उनका जिन पर तेरा प्रकोप हुआ और न उनका जो भटक गये।

मक्का काल में उतरी हुई आयतें (देखे मक्का काल में अवतरित प्रारम्भिक सूरे कुरान सूरा 73-74, 77-78, 80 से 108, 112 से 114 इत्यादि) उस समय के अरब समाज के नैतिक स्तर को उठाने और अपने अनुयाइयों को इस कार्य में धैर्य से काम लेने की अपील करती है। अल्लाह की प्रशंसा और केवल उसी को उपासना का अधिकारी बताती है। इनमें निन्दा हिंसा बल प्रयोग धमकी और आतंकवाद का कहीं नाम नही है। साथ ही साथ इन आयतों मं अनेक तर्क देकर यह अपील की गई है कि मोहम्मद साहब सचमुच अल्लाह के रसूल (संदेशवाहक) है। और उन पर जो कुरान उतारी जा रही है वह न तो उनकी बनाई हुई है न किसी दूसरे व्यक्ति के द्वारा। उनका प्रयास यह भी है कि यहूदी और ईसाई जो मूसा और ईसा की पैगम्बरी में पहले से ही विश्वास करते थे मोहम्मद साहब को भी उसी श्रेणी में पैगम्बर के रुप में स्वीकार कर लें। और उनके समाचार को अपने पैगम्बों द्वारा लाये गये समाचार के अनुरुप मान लें।

यह अनुरोध मदीना के प्रारम्भिक काल में भी चलता रहा क्योंकि मदीना के आस पास और मदीना में यहूदियों की काफी बस्तियां थी। यह लोग व्याज पर रुपया देते थे और बहुत धनाढ्य थें। उनके पास बहुत सुन्दर मकान और बाग बगीचे थे। मोहम्मद साहब का विचार था कि यदि यहूदी उनको पैगम्बर मान लें तो उनको अपने अभियान (मूर्ति पूजा खण्डन) में बहुत सहायता मिल सकती है। (देखें सूरा 64-98) लेकिन जब सारे प्रयास विफल हो गये और यहूदियों ने उनको पैगम्बर मानने से इन्कार कर दिया तब उन्होंने यहूदियों और ईसाईयों के पवित्र स्थान यरुशलम की ओर मुंह फेरकर नमाज पढ़ना वर्जित कर दिया और मक्का की ओर मुंह करके नमाज पढ़ने का आदेश दिया। (कुरान 2 : 144)

मक्का काल में भी मोहम्मद साहब का ध्येय सदैव की भांति यही था कि पूजा केवल अल्लाह की हो। शेष सभी पूजा पद्धति समूल नष्ट कर दी जांय। अरब देशवासियों में व्याप्त कुरीतियों कबीलों के आपसी झगड़े खून खराबा चोरी व्यभिचार, मदिरापान, द्यूत क्रीड़ा, नवजात बच्चियों को मारना तथा दूसरे अंध विश्वासों को हटा कर एक संगठित अरब राष्ट्र की स्थापना की जाय। अरब निवासी देखते थे कि उनके आस पास बसे ईसाइयों और यहूदियों के पास अपने अपने पैगम्बर और उनके द्वारा आई हुई दैवी पुस्तके बाइबिल और तौरात है जिनके बल पर वह अपने समाज को संगठित किये हुये है और अरबी कबीलों की तुलना में कहीं अधिक सम्पन्न और सुसंस्कृत है। उनके धर्म गुरु अपने समाज का मार्ग दर्शन करते है जब कि अरब कबीले एक दूसरे से लड़ते रहते है। यह कबीले कहते भी थे कि काश हमारे लिये भी हममे से कोई पैगम्बर और किताब उतरी होती तो हम भी इन लोगों की तरह सम्पन्न और सुसंगठित होते।

इस पृष्ठ भूमि में अशिक्षित असंगठित और बिखरे हुए अरब कबीलों को अरब के नाम पर संगठित करने और उपरोक्त सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन को इन विविध कबीलों द्वारा स्वीकार कराने के लिये उनमें एक स्वीकार्य पैगंबर और किताब का उतरना आवश्यक था। फिर ईसाइयों और यहूदियों की किताबों में आने वाले रसूल की भविष्य वाणी भी की गई थीं। इसलिए मोहम्मद साहब को रसूल और कुरान को आस्मानी किताब स्वीकार कराना अत्यावश्यक था और इन सब सुधारों को शीघ्र सम्पन्न करने का सीधा और सरल मार्ग भी था।

इसलिये कुरान में प्रारम्भ से लेकर अंत तक बार बार दूसरी हिदायतों के साथ साथ इन दो बातों पर बहुत बल दिया गया है। चूकिं मक्का के लोग इन दोनों ही बातों से चिढ़ते थे इसलियें मक्का काल में मोहम्मद साहब का वैयक्तिक विरोध अधिक था। केवल अल्लाह को उपास्य मानना और उसकी कथित बेटियों के महत्व को अस्वीकार करने से भी जो उनकी उपास्य देवियां थी वह नाखुश थे। अल्लाह को तो सर्वोच्च उपास्य वह मानते ही थे। इसमें कोई मतभेद नहीं था।

मक्का में उतरी आयतें प्रारम्भ में इन सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन पर अधिक बल देती है। मूर्ति पूजा और मूर्ति पूजकों को इन कार्यो से विरत करने के लिये तर्क का उपयोग करती है। बल प्रयोग निषेध करती है।

गुलामों अनाथों और भूखों के प्रति सद्व्यवहारः

किसी गुलाम की गरदन को छुड़ा देना या अकाल के दिन में खाना खिला देना। या किसी नातेदार अनाथ को या धूलधूसरित मोहताज को खाना खिला देना।

फिर उन लोगों में से होता जो ईमान लाये और एक दूसरे को धैर्य की ताकीद की और दया करने की ताकीद की। वे लोग है सौभाग्य वाले। और जिन लोगों ने हमारी आयतों पर विश्वास न किया वह दुर्भाग्यवाले है। (कुरान 90:13,19)

और उसनें तुम्हें निर्धन पाया तो धनवान बना दिया। तो जो अनाथ हो उस पर जोर न दिखाना और जो मांगने वाला हो उसे झिड़कना मत।

और जो तुम्हारें रब का अहसान है उसकी चर्चा करना। (93:8-11)

इस्लाम के शान्तिमय प्रेम मय और समझौतापरक स्वरुप के पक्ष में दी जाने वाली दलीलेः

कुरान की निम्नलिखित आयतें जो इस स्वरुप के पक्ष में दी जाती है मक्का काल की आयते हैः

यह आयतें कुफ्र को बल पूर्वक दमन करने के लिये पर्याप्त शक्ति के अभाव में उसके साथ सह अस्तित्व की मजबूरी दर्शाती है। यह गैर मुसलमानों के साथ प्रेम अहिंसा अथवा बंधुत्व की वकालत नहीं करती जैसा कि बताया जाता है।

और अल्लाह तुम्हें शांति के घर की ओर बुलाता है। और जिसे चाहता है सीधे मार्ग पर लगा देता है।(कुरान 10: 25)

कह दो : मुझे न तो अपने बुरे का अधिकार है और न भले का बस जो अल्लाह चाहे वही होता है। हर जाति के लिए एक नियत समय है। जब उनका नियत समय आ गया तो उससे न एक घड़ी पीछे रह सकते है और न आगे बढ़ सकते है। (कुरान 10 : 99)

और यदि तेरा रब चाहता तो धरती में जितने लोग है सब के रब ईमान ले आते फिर क्या तू लोगों को विवश करेगा कि वे ईमान वाले हो जायं।

कह दो : लोगों तुम्हारे रब की ओर से हक सत्य संदेश आ चुका है। तो जो कोई सीधा मार्ग अपनाये वह अपने ही लिए सीधा मार्ग अपनाये वह बपने ही लिए सीधा मार्ग अपनायेगा और जो कोई भटके उसके भटकने का बवाल भी उसी पर पड़ेगा और मै तुम्हारें ऊपर कोई हवलदार नहीं हूं। (कुरान 10 : 108)

जो कुछ तुम पर वह्वा ईश्वरीय संदेश आ रहा है तुम उस पर चलो और धैर्य से कम लो यहां तक कि अल्लाह फैसला कर दे। और वही फैसला करने वालों में सबसे उत्तम है। (कुरान 10 : 109)

तो निश्चय ही कठिनाई के साथ आसानी है। निश्चय ही कठिनाई के साथ आसानी है। तो जब तुम फुरसत पाओं तो परिश्रम करो। और अपने रब की ओर लौ लगाओं। (कुरान 94:5-8)

मै उसकी इबादत पूजा करता नहीं जिसकी इबादत तुम करते हो। और न तुम ही उसकी इबादत करते हो जिसकी इबादत में करता हूं। और न मै उसकी इबादत करुंगा जिसकी इबादत तुम करते आये हो। और न तुम उसकी इबादत करोगे जिसकी इबादत मै करता हूँ । तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन और मेरे लिए मेरा दीन । (कुरान 109 : 1-6)इसी प्रकार की दूसरी आयत है :-

दीन धर्म के बारे में कोई जबरदस्ती नहीं। सही बात नासमझी की बात से अलग होकर बिल्कुल सामने आ गयी है। अब जो तागूत (झूठे उपास्यों को)ठुकरा दे और अल्लाह पर ईमान लाये उसने मजबूत सहारा थाम लिया जो कभी टूटने का नहीं। और अल्लाह सुनने और जानने वाला है। (कुरान 2:256)

मक्का के इस आरम्भिक काल में मोहम्मद साहब को कहा गया था कि अपने निकट्तम नातेदारों में इस्लाम का प्रचार करों और जो तुम्हारा कहना नहीं मानते उनसे विरक्त हो जाओं अर्थात् उन्हें आगे गुछ मत कहो और न उनसे वास्ता रखो।

और अपने निकट्तम नातेदारों को सचेत करो। और जो ईमान वाले तुम्हारे अनुयायी हो गये है उनके लिए अपना बाजू भुजा झुका दो अर्थात् उनको अपनी शरण में लेकर उनकी सुरक्षा करो फिर यदि वे तुम्हारी अवज्ञा करें तो कह दो जो कुछ तुम करते हो उससे मै विरक्त हूं। (कुरान 26 : 214,215,216)

मक्का निवासियों का मन जीतने के लिए अल्लाह ने अपने को सम्पूर्ण सृष्टि का रब न कहकर मक्का नगर का रब कह दिया।

हे मुहम्मद साहब कहो : मुझे तो बस यही हुक्म दिया गया है कि इस नगर के रब की इबादत करुं जिसने इसे प्रतिष्ठित बनाया और हर चीज उसी की है।..........।

परन्तु मक्का निवासियों पर इल बातों का कोई अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ा और वह मोहम्मद साहब का विरोध यथापूर्व करते रहे।

इस प्रकार प्रारम्भ में लगभग 20 लोगों ने जिनमें मोहम्मद साहब के नातेदार मित्र और वह गुलाम थे जिन्हें मुसलमानों ने खरीद लिया था और कुछ स्त्रियां भी थी मोहम्मद साहब को अल्लाह का रसूल संदेशवाहक और कुरान को ईश्वरीय संदेश स्वीकार कर लिया था। इन धर्मान्तिरित स्त्रियों ने इस नाजुक समय में दूसरे मर्दो और स्त्रियों को इस्लाम में दीक्षित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने अपनी बहनों द्वारा उनके पतियों बच्चों और दूसरे रिश्तेदारों को इस्लाम में दीक्षित किया।

इस्लाम का गुप्त प्रचार

जैसे जैसे मुसलमानों की संख्या बढ़ी विरोधियों का विरोध भी बढ़ा। **इसलिए बेहतर समझा गया कि प्रचार गुप्त रुप से किया जाय।** एक नव मुस्लिम अल अकरम का मकान इस कार्य के लिए उससे ले लिया गया। जो लोग इस्लाम में रुचि दिखातें थे उनको गुप्त रुप से इस मकान में ले जाकर मोहम्मद साहब से मिलवाया जाता था। वह उसको इस्लाम की खूबियां समझाकर उसे मुसलमान होने की शपथ दिला देते थे। इस्लाम के प्रारम्भ होने के 6 वर्ष आद उमर बाद में दूसरे खलीफा का धर्मान्तरण इसी मकान में हुआ। इस मकान में यह अन्तिम धर्मान्तरण था।

इस समय तक कुरान की शिक्षा बहुत ही सीधी सीधी है। ईश्वर की एकता मोहम्मद साहब का उसका रसूल होना कयामत के रोज मुर्दो का उठना और उनका हिसाब होना भले और बुरे कर्मो का फल भोगना कदाचित यही सिद्धान्त है जिन पर जोर दिया गया है। और कर्तव्यों में नमाज, जकात, दान तोलने में ईमानदारी सत्य बोलना अ व्यभिचार और प्रतिज्ञाबद्धता का पालन। अब मोहम्मद साहब खुलकर यह कहने लगे कि मूर्ति पूजक बहुदेवतापूजक और उनके उपास्य देव मूर्तियां मरकर जहन्नम में जायेंगे। जबकि मुसलमान जन्नत में जायेंगे। दोजख और जहन्नम का भी सजीव वर्णन किया जाने लगा।

जन्नत का वर्णन–

उनके लिए जानी बूझी रोजी है मेवे और उनका सम्मान किया जायेगा

नेमत भरी जन्नतों में तख्तों पर आमने–सामने बैठे होंगे : निथरी बहती णण शराब के स्त्रोत णणण से मद्य मात्र भर भर कर उनके बीच फिरायें जायेंगे उज्जवल पीने वालों के लिए स्वादिष्ट न उससे कोई सरदर्द होगा और न वे उस से मतवाले होंगे। और उनके पास निगाहें झुकाने वाली सुन्दर आंखों वाली स्त्रियां होंगी ऐसी णण निर्मल णण मानों छिपे हुए अण्डे है।

णण कुरान 37 : 41–49 णणण

दोजख का वर्णन–

तो वे णण जहन्नम के लोग णणण उसे णण जक्कूम, एक वृक्ष जो बहुत कड़ूवा और दुर्गान्धित होता है इसका दूध शरीर में लगने से सूजन आ जाती है। णणण खायेंगे और उसी से अपने पेट भरेंगे। फिर इसके ऊपर से पीने के लिए उन्हें खौलता हुआ पानी मिलेगा

और इसके बाद उनकी वापसी उसी भड़कती हुई आग णण जहन्नम णणण की ओर होंगी।

निश्चय ही इन्होंने अपने पूर्वजो को पथभ्रष्ट पाया : (कुरान 37:66–69)

न केवल उनको जो इस्लाम पर विश्वास नहीं ला रहे थे अपितु उनके पूर्वजो को भी इस प्रकार दोजख का निवासी बताना स्वाभाविक रुप से उत्तेजना उत्पन्न करने वाला है। और यही हुआ भी। लोग समझने लगें कि अब मोहम्मद साहब को कत्ल करने के अतिरिक्त कोई दूसरा विकल्प शेष नहीं रहा था। मक्का में गुलामों अनाथों और दरिद्र लोगों में भी इनके प्रचार से सम्पन्न लोगों के विरुद्ध विद्रोह पनप रहा था।

मुसलमानों की तेजी से बढती संख्या से मक्का निवासी संशकित हो गये। अभी तक वह मोहम्मद साहब को केवल एक सिराफिरा अति उत्साहित प्रचारक मानते आये थे। परन्तु उनके बढ़ते प्रभाव और अनुयाइयों की संख्या से उनकी मूर्तियां मूर्ति मन्दिर काबा और उनकी संस्कृति खतरे में पड़ती नजर आने लगी। फलस्वरुप उनका मुसलमानों से विवाद होने लगा जिसका समापन कभी कभी खून खराबे में होने लगा।

मोहम्मद साहब और उनके असरदार अनुयाइयों को भी अपमानित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी गई परन्तु उनको शारीरिक हानि पहुंचाने का साहस उनके विरोधियों में नहीं था। कारण था अरब निवासियों में परिवार और कबीले के प्रत्येक सदस्य के प्रति घनिष्ट निष्ठा। परिवार अथवा कबीले के किसी भी व्यक्ति को कत्ल कर देने से उसके खून के बदले खून लेना उसके परिवार और कबीलें के सम्मान का प्रश्न बन जाता था।

इस स्थिति में साधारण और गुलाम नव मुस्लिमों को जिनका कोई रक्षक अथवा मददगार न था शारीरिक कष्ट देने और कत्ल करने पर कोई पूछने वाला नहीं था।

उनको कैसे बचाया जाय यह प्रश्न मोहम्मद साहब के सामने मुंह बाकर खड़ा हो गया।

पहला देश त्याग–

इन यातनाओं अपमानों और खतरें से बचने के लिए मोहम्मद साहब ने अपने उन अनुयाइयों को जिनके पीछे कोई रक्षक न था ईसाई देश अबिसीनिया में जाकर बसने का सुझाव दिया जब तक कि अरब में हालात बेहतर न हो जांय। इस देश का शासक ईसाई था और वहां धर्म के नाम पर भेदभाव नहीं था। मोहम्मद साहब कीसलाह पर 11 लोगों ने जिनमें से 4 के साथ उनकी स्त्रियां भी थी अबिसीनिया को प्रस्थान कर दिया। मक्का के कुरैशों ने उनका पीछा भी किया परन्तु वह किसी प्रकार अबिसीनिया पहुंचने मे सफल हो गये जहा ंउनका निवास शान्तिपूर्ण और सुरक्षित रहा।

मोहम्मद साहब द्वारा की गयी मक्का निवासियों के धर्म और पूर्वजो की निन्दा से तिलमिलाकर वह लोग अनेक बार उनके चाचा और रक्षक अबू तालिब से जाकर शिकायत करते थे। वह कहते थे कि वह मोहम्मद साहब को इस कार्य से रोंकें। यदि वह ऐसा न कर सकें तो फिर उन लोगों को स्वयं मोहम्मद साहब को दण्डित करने के लिए स्वतन्त्र कर दें। परन्तु अबू तालिब सदैव बलपूर्वक अपने भतीजे के पक्ष में खड़े हो जाते थे। वह उनके विरोधियों को चेतावनी दे देते थे कि मोहम्मद साहब का मौखिक विरोध तो वह सहन कर सकते थे परन्तु यदि उनको शारीरिक हानि पहुंचाई गई तो उसका फल दोषियों का अवश्य भुगतना पड़ेगा। अब तालिब जैसे वृद्ध प्रतिष्ठित और असरदार व्यक्ति का सुरक्षा कवच मोहम्मद साहब की किसी भी शारीरिक हानि से बचाता रहा परन्तु विद्रोह पनपता रहा और मोहम्मद साहब को कत्ल कर देने की योजनाये बनती और रद्द होती रही।

दूसरा देश त्याग (615-616 ई0)

इस समय फिर परिस्थितियों ऐसी हो गई जैसी पहले देश त्याग के समय थी। अबिसीरिया का पहला अनुभव सुखद रहा था। इसलिये मोहम्मद साहब ने एक बार फिर लोगों को वहां शरण लेने की सलाह दी। इस बार 102 व्यक्ति स्त्री और पुरुष मक्का त्याग कर एबीसीनिया चले गये। इस संख्या में उनके बच्चे शामिल नहीं है।

पिछ्ले तीन साल में एक भी धर्मान्तरण नहीं हुआ था। मोहम्मद साहब ने मक्का से 60-70 मील दूर अल तैफ नगर में प्रचार करने का मन बनाया। अल तैफ निवासियों और मक्का के कुरैश के बीच सम्बन्ध अच्छे नहीं थे। इसलिए उन्हें आशा थी कि वह लोग कुरैश के विरुद्ध उनका साथ देने को तैयार हो जायेंगे।

अल तैफ में भी एक देवी की पूजा की जाती थी। मोहम्मद साहब ने तैफ में पहुंचकर जब नैतिक मूल्यों की बात की तो लोग उनकी ओर आकर्षित हुए परन्तु जैसे ही उन्होंने मूर्ति पूजा का खण्डन करना प्रारम्भ किया यह वहां के निवासियों को बहुत बुरा लगा और लोगों ने उनको वहां से चले जाने को कहा। कुछ बेहूदा लोगों ने उनकी वापसी पर तीन मील तक उनका पीछा किया और उन पर पत्थर फेकें जिससे वह और उनके साथी जैद दोनों घायल हो गये। जैद ने जैसे तैसे उनकी रक्षा की। तैफ से तीन मील बाहर एक बगीचें में बैठ्कर उन्होंने कुछ चैन की चांस ली। उस बगीचें में मोहम्मद साहब ने बहुत ही करुणाजनक और ह्रदय विदारक शब्दों में ईश्वर से प्रार्थना की और अपनी असहाय अवस्था पर दुख प्रकट किया जिसके कारण वह अल्लाह द्वारा उनको सौंपे गये कार्य में असफल हो रहे थे। उनकी उस फरियाद को सुनकर बगीचें में एक गुलाम ने उनको पैगम्बर स्वीकार कर लिया और उनकी सेवा शुश्रूषा की। उसकी देखा देखी कुछ लोगों ने भी उनसे सहानुभूति जतायी।

आशा की किरण

जब मोहम्मद साहब मक्का के निकट पहंचे तो हज का समय आ गया था और दूर दूर से हज यात्री मिल गये। मदीने में मोहम्मद साहब का ननिहाल था। वहां के कुछ कबीलों को वह जानते थे। मोहम्मद साहब ने उनको बातचीत के लिए बैठ्ने का निमन्त्रण दिया जो सहर्ष स्वीकार कर लिया गया क्योंकि वह लोग भी उस व्यक्ति से मिलने और उसकी अधिक जानकारी प्राप्त करने के इच्छुक थे जिसने मक्का में इतना बड़ा बवाल खड़ा कर दिया था। वहां बैठकर मोहम्मद साहब ने उन लोगों को इस्लाम के सिद्धान्तों से परिचित कराया और अपने को अल्लाह का रसूल होने के दावे को दोहाराया। अपनी बातों से प्रभावित होते देखकर उन्होंने उनसे पूछा कि क्या वह उन्हें मदीना बुलाने और वहां उनकी रक्षा करने के लिए वचन देने को तैयार है?

उन्होंने उत्तर दिया तुम्हारी शिक्षा और बातों का हम समर्थन करते है परन्तु जहां तक मदीने में तुम्हारी रक्षा का प्रश्न है वहां हमारे कबीलों में इस समय आपसी युद्ध चल रहा है। यदि इस समय तुम वहां आये तो कदाचित हम तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकेंगे। हमे वापिस मदीने जाने दो। यदि हमारे यहां शान्ति स्थापित हो गई और तुमकों वहां बुलाने में दूसरे कबीले की भी सहमति हुई तो हम अगले साल इसी समय इसी स्थान पर तुमसे मिलकर इस विषय पर बात करेंगे। बस इस बात यहीं समापत हो गई और मोहम्मद साहब अगली मुलाकात का इंतजार करने लगे।

मदीने में स्थिति अनुकूल होती गयी। वहां के दो मुख्य कबीले खजराज और आंस गृह युद्ध से तंग आ चुके थे। वहां के यहूदी जो संख्या में काफी और असरदार थे मोहम्मद साहब के अनुकूल थे क्योंकि उन्होंने सुना था कि वह उनके पैगम्बर मूसा को मानते है और उनकी पुस्तक को ईश्वरीय सन्देश बताते है। दूसरे उनके पवित्र ग्रन्थों में एक पैगम्बर के आने की भविष्यवाणी भी थी। हो सकता है यही वह पैगम्बर हो।

अकाबा का पहला इकरारनामा

अप्रैल 621 ई0 में जब मदीने के यात्री फिर हज पर आये तो पूर्व निश्चित स्थान पर मोहम्मद साहब उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। यह देखकर उनके हर्ष का कोई ठिकाना नहीं रहा कि उनमें से 12 व्यक्ति 10 खजराज कबीले के और दो आंस कबीलें के उनसे इस्लाम की दीक्षा लेने के लिए तैयार होकर आये थे और उन्हें मदीने ले जाकर सुरक्षा देने को तैयार थे।

उन्होंने मोहम्मद साहब को वचन दिया हम एक अल्लाह के अतिरिक्त किसी भी दूसरे उपास्य की पूजा नहीं करेंगे चोरी नहीं करेंगे व्यभिचार नहीं करेंगे अपने बच्चों की हत्या नहीं करेंगे पीठ पीछे किसी की बुराई नहीं करेंगे और रसूल की आज्ञा का पालन करेंगें।

इस सौगन्ध को इस्लाम के इतिहास में **अकाबा का पहला इकरारनामा** कहा जाता है और यह उसका एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। अकाबा उस स्थान का नाम है जहां यह घटना घटी। अब वहां एक मस्जिद बन गई है। (म्योर 118)

यात्रियों के मदीना पहुंचने पर वहां इस्लाम का तेजी से प्रसार हुआ। खजराज और आंस के दोनों कबीलों में से जो चिरकाल से युद्धरत थे अनेक लोग मुसलमान हो गये। साथ साथ बैठकर कुरान पढ़ी जोन लगी और धर्म चर्चा होने लगी। इन लोगों के अनुरोध पर मोहम्मद साहब ने अपने एक शिष्य मुसाब को मक्का से मदीना भेज दिया जो उन्हें इस्लाम की गूढ़ शिक्षा दे सके।

मक्का में इस्लाम का प्रचार मोहम्मद साहब नसीहत (परामर्श) फहमायश (उपदेश , चेतावनी)तरगीब (प्रेरणा प्रलोभन) तबलीग (प्रचार) से ही कर रहे थे। धर्मान्तरण की धीमी गति से वह निराश हो चुके थे उनके नातेदारों और गुलामों के अतिरिक्त दूसरे लोगों का इस्लाम के प्रति कोई आशाप्रद आकर्षण नहीं था। इस स्थिति में बल प्रयोग अथवा बल प्रयोग की धमकी देने का प्रश्न ही नहीं उठता था। और उनका मिशन इस बिन्दु पर आकर कम से कम मक्का में ठप हो गया था। अब उनकी सब आशाएं मदीने पर केन्द्रित थीं। मक्का के मूर्ति पूजकों और उनको पूर्वजो के सम्बन्ध में जो उन्होंने दोजख का वर्णन करता प्रारम्भ किया था वह बन्द कर दिया और अन आक्रामक रुख अपना लिया।

तुम पर जो वहम तुम्हारे रब की ओर से आयी है तुम उसी पर चलो उसके सिवा कोई इलाह उपापस्य नहीं है और **मुश्रिकों के पीछे न पड़ों।**

और यदि अल्लाह चाहता तो ये शिर्क न करते। **और हमने तुम्हें इन का कोई रखवाला नहीं बनाया है और न तुम इनके कोई हवलदार हो।**

और अल्लाह के सिवा ये जिन्हें पुकारते है तुम लोग उन्हें गाली न दो कहीं ऐसा न हो कि ये लोग हद से आगे बढ़कर अज्ञान के कारण अल्लाह के गाली देने लगे..........(कुरान 6: 107-109)

यह तरकीब काम कर गई। मक्का निवासियों का ध्यान उनकी ओर कम हो गया। वह आश्वस्त हो गये कि किसी भी कारण से हो मोहम्मद साहब अब उनकी उनके पूर्वजो की और उनके देवी देवता की निन्दा नहीं करेगें।

मार्च अप्रैल 622 ई0 में हज्ज के लिए यात्री फिर मक्का की ओर प्रारम्भ हो गये। मदीनें में इस्लाम के प्रचार प्रसार और उसकी गति के समाचार निश्चय ही मोहम्मद साहब को पहले भी मिलते रहे होंगें। अब मदीने के नव मुसलमानों से साक्षात भेंट का इन्तजार था। आखिर निर्धारित स्थान पर उनके पहुंचने का समाचार आ ही गया।

मोहम्मद साहब की सतर्कता और दूरदृष्टि

मोहम्मद साहब अपने चाचा अल अब्बास के साथ आधी रात के बाद मीटिंग के लिए मक्का से चले और प्रातः काल से पहले ही वहां पहुंच गये। उनका यह प्रस्थान बहुत ही गुप्त रखा गया। मीटिंग का स्थान भी यह सोंचकर रखा गया था कि यदि बात खुल जाने पर मक्का निवासी मीटिंग में भाग लेने वाले लोगों पर आक्रमण करें तो वह वहां सें सफलतापूर्वक मदीना भाग सकें। इसी विचार से मीटिंग की तिथि भी हज्ज के पश्चात रखी गयी जब सभी यात्री मदीने की ओर जा रहे होंगे। समय रात का और स्थान वहीं सुनसान अकाबा की पहाड़ी रखा गया।

अकाबा का दूसरा इकरारनामा

उनके वहां पहुंचने के थोड़ी देर बाद ही मदीने के मुसलमान भी एक एक दो दो कर वहां पहुंच गये। वह कुल 73 लोग थे। 62 खजराज के और 11 आंस के। इनमें दो स्त्रियां भी थी। जब सब बैठ गए तब अल अब्बास ने कुछ इस प्रकार कहाः

ऐ खजराज के लोगों सुनो। ये हमारा नातेदार मोहम्मद हमारी सुरक्षा में हमारे साथ सम्मानपूर्वक रह रहा है। उसके परिवार के लोग वह भी जो मुसलमान हो गये है और वह भी जो नहीं हुए है अन्तिम सांस तक उसकी रक्षा करेंगे। किन्तु वह तुम्हारी सुरक्षा में मदीना जाने का इच्छुक है। इसीलिए आप सब लोग इस विषय पर भलीभांति सोच विचार कर लें कि उसकी सुरक्षा का कितना मूल्य आपको चुकाना पड़ सकता है। यदि आपने संकल्प कर लिया है कि आप हर स्थिति में इनकी रक्षा करेंगें तब ही इनकी रक्षा की सौगंध लीजिए अन्यथा इस विचार को तुरन्त मन से निकाल दीजिए।

इसका उत्तर देते हुए उनके वृद्ध मुखिया अल बरा ने कहाः

हमने तुम्हारी बात ध्यान से सुल नी है। हमारा संकल्प दृढ़ है। हमारा जीवन पैगम्बर की सेवा में हाजिर है। अब उनका जो भी निश्चय हो हमें बतायें।

मोहम्मद साहब ने कुरान की कुछ आयतें पढ़ी और इस्लाम के मुख्य बिन्दु उन्हें समझायें। उसे स्वीकार करने से होने वाले लाभ बताये और करने से हानियां। फिर उन्होंने कहा कि मै इतने से ही सन्तुष्ट हो जाऊंगा यदि आप लोग मुझे अपनी स्त्री और बच्चों से भी अधिक सुरक्षा देने की सौगन्ध उठायें।

इस पर उन 71 व्यक्तियों में से प्रत्येक यह सौगन्ध लेने को उतावला होने लगा और शोर मचले तगा। तब अल अब्बास ने मोहम्मद साहब का हाथ में लेकर कहा खातोश हमारे चारों तरफ जासूस लगे हो सकते है। सौगन्ध लो और चुपचाप अपने घरों को वापिस चले जाओ। हम नहीं चाहते कि हमारे शत्रुओं को इसकी भनक लग जाये और आप लोगों की सुरक्षा खतरे में पड़ जाये। तब अल बरा से प्रारम्भ होकर सभी 71 लोंगो ने अरब की प्रथानुसार मोहम्मद साहब के हाथ पर हाथ रखकर सौगन्ध ली। जब यह कार्य पूरा हो गया तो मोहम्मद साहब ने उनमें से 12 प्रतिष्ठित व्यक्तियों के नाम लिए और कहा हजरत मूसा ने अपने अनुयाइयों में से 12 लोगों को उनका नेता नियुक्त किया था। इसी प्रकार आप 12 लोग अपने सब लोगों के जामिंन हो (अर्थात आप यह देखेंगे के ये अपने वायदे से विचलित न हों) और आप सब लोगों का जामिन मै हूं। उन सब लोगों ने एक स्वर से कहाः आमीन ऐसा ही हो।

इसके बाद मोहम्मद साहब द्वारा सभा विसर्जन कर दी गयी और लोग अपने अपने स्थानों को वापिस हो गये। इस इकरारनामें को अकाबा का दूसरा इकरारनामा कहा जाता है।

खदीजा और अबू तालिब की मृत्यु

मोहम्मद साहब की जीवनी सिरातुन्नवी के लेखक और मुस्लिम जगत के विख्यात विद्वान शिबली नुमानी भी अपनी उपरोक्त पुस्तक के खण्ड 1 में पृष्ठ 193 पर प्रारम्भिक काल की सहनशीलता का कारण (Reasons for Early Tolerance) यही भय बताते है कि यदि विरोधियों द्वारा मोहम्मद साहब का वध कर दिया जाता तो मोहम्मद साहब के सशक्त परिवार वाले उनके वध का बदला लेने के लिए भयंकर रक्तपात से किसी प्रकार भी रोके नहीं जा सकते थे। मोहम्मद साहब के चाचा अबू तालिब भी इस प्रकार के गृह युद्ध को टालने के लिए मोहम्मद साहब से अनुरोध करते रहते थे कि वह इस प्रकार की वार्ता न करे जिससे मक्का निवासियों में उत्तेजना फैले।

दिसम्बर 619 ई0 में मोहम्मद साहब की पत्नी खदीजा की मृत्यु और उसके शीघ्र पश्चात जनवरी 620 ई0 में उनके चाचा अबू तालिब की मृत्यु ने उनके दो शक्तिशाली रक्षकों को छीन लिया। **अब मोहम्मद साहब को शारीरिक हानि से बचाने वाला अबू तालिब और खदीजा जैसा असरदार कोई व्यक्ति नहीं रहा था।**

इसके बाद मक्का में रहकर खतरा मोल लेने का कोई औचित्य नहीं रह गया था। मोहम्मद साहब के आदेश पर अगले दे तीन महीनों में धीरे धीरे सभी मक्का निवासी मुसलमान मदीना पहुंच गये।

मक्का से मदीना को गुप्त प्रस्थान ण हिजरत णण

अब मोहम्मद साहब और उनके अभिन्न मित्र अबू बकर मदीना जाने की गुप्त योजना बनाने में लग गये। थोड़े दिनों बाद जैसे ही यह तैयारियां पूरी हो गई एक दिन रात के समय वह दोनों मकका से चलकर मदीना से विपरीत दिशा में पहाड़ियों की एक ऊंची गुफा में जा छिपे। मक्कावासियों को जैसे ही उनके गुम हो जाने की सूचना मिली वह यह सोचकर कि उनका गन्तव्य स्थान निश्चय ही मदीना होगा उसी दिशा में उनको खोजतें रहे। जब इस खोज का तीन दिन कोई नतीजा नहीं निकला तो वह समझ गये कि उनके शिकार उनकी पहुंच के बाहर जा चुके है। उधर मोहम्मद साहब को भी जब गुप्त रुप से यह सूचना मिल गयी कि उनके शत्रु निराश होकर उनका पीछा करना छोड़ चुके है तब एक रात को वह पहले से इसी कार्य के लिए खरीदें गये और गुप्त स्थान पर रखे गये दो तेज ऊंटों पर सवार होकर मदीने की ओर प्रस्थान कर गये।

> जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि मक्का से प्रस्थान करने के दिन ण 20 जून 622 ई0 णण को हिजरत कहा जाता है और इसी दिन से मुस्लिम कैलेण्डर हिजरी प्रारम्भ होता है। इस्लाम के इतिहास में यह दिन मक्का की हताश कमजोर और अपमानजनक स्थिति और मदीने के इस्लाम के अत्यन्त गौरवपूर्ण काल के बीच में watershed ण जल विभाजक काठी णण है।

मोहम्मद साहब अबू बकर और अनेक मुजाहिरों के परिवार पीछे मक्का में ही रह गये थे। मक्का निवासियों ने उनके परिवारों को छुआ तक भी नहीं। इससे पता लगता है कि इस्लाम से पहले भी दुश्मन के परिवार के साथ कितना न्यायपूर्ण व्यवहार किया जाता था।

मदीना काल

इस घटना के बाद से इस्लाम का मदीना काल प्रारम्भ होता है। मदीने में मोहम्मद साहब की स्थिति मक्का के बिल्कुल विपरीत हो गयी थी। मक्का में जहां मोहम्मद साहब को आतंक, व्यंग, अपमान और भय का सामना करना पड़ता था। वहां मदीना में उनका आदर सम्मान अल्लाह के रसूल पद के अनुरुप था। अल्लाह के आदेश उन्हीं के माध्यम से प्राप्त होते थे। अल्लाह तो अदृश्य था परन्तु उसके आदेशों के माध्यम मोहम्मद साहब तो जीते जागते उनके मध्य में थे। यद्यपि वह बराबर कहते रहते थे कि वह तो अन्य लोगों की भांति केवल एक मनुष्य है परन्तु अल्लाह से घनिष्ट सम्पर्क के कारण साधारण लोग तो उनकी इस प्रकार की बातों को केवल उनकी विनयशीलता ही मानते थे। इस काल में उतरी आयतों द्वारा मुसलमानों को बार बार रसूल के प्रति सम्मानजनक व्यवहार करने के आदेश दिये गये है।

''निश्चय ही अल्लाह और उसके फरिश्ते नबी पर रहमत भेजते है। हे लोगों जो ईमान लाये हो तुम भी उन पर रहमत भेजों और खूब सलाम भेजो।''

''जो लोग अल्लाह और उसके रसूल को दुःख पहुंचाते है उन पर अल्लाह ने दुनिया और आखिरत में लानत की है और उनके लिए अपमानजनक यातना तैयार कर रखी है।'' (कुरान 33:56-57)

इसके अतिरिक्त अनेक आयतों द्वारा रसूल की मौजूदगी में शालीन व्यवहार किस प्रकार किया जाय किस प्रकार उठा बैठा और बोला जाय यह भी आदेश दिये गये है।

मदीने में उतरी आयतों में अब केवल नैतिक मूल्यों की बात नहीं है। अब विरोधियों को डराना और धमकाना प्रारम्भ हो जाता है।

मोहम्मद साहब की जीवनी पढ़ने से ज्ञात होता है कि वह दूर दृष्टि धैर्य और सतर्कता से काम लेने वाले व्यक्ति थे। मक्का का गुप्त प्रचार वहां से मदीने को प्रस्थान करने से कुछ पहले से कुरैश की उपास्य मूर्तियों को भला बुरा कहना बंद कर मक्का निवासियों को अपनी गतिविधियों के प्रति उदासीन बना देना मक्का से मदीना जाने के लिए सीधा मार्ग न अपनाकर उल्टा और टेढ़ा मार्ग अपनाना पहाड़ी गुफा में अपनायी गयी सतर्कता और पहले से खरीदे गये दो तेज ऊंटो का गुप्त प्रबन्ध इत्यादि रणनीति उनकी रसूलत के प्रारम्भिक दिनों से ही उनकी दूरदृष्टि सर्तकता और कुशल रणनीति का संकेत देते है।

मदीने के दस वर्ष यह सिद्ध कर देते है। कि आधुनिक संसार द्वारा उनको इतिहास का सर्वश्रेष्ठ रणनीतिज्ञ (Strategist)और सर्वश्रेष्ठ मानव संसाधन विशेषज्ञ (Human Manager) स्वीकार किया जाना नितान्त न्यायसंगत है। जो पाठक इस विषय का विषद अध्ययन करना चाहते हो उनको सर विलियम म्यौर द्वारा लिखित पुस्तक द लाइफ आंफ मोहम्मद प्रकाशक वायस आंफ इण्डिया 2/18 अन्सारी रोड दरियागंज नई दिल्ली पढ़नी चाहिए।

मदीना पहुंचकर भी मोहम्मद साहब ने स्वाभाविक सावधानी बरतते हुये पारम्परिक युद्धरत खजराज अथवा आस से सम्बन्धित किसी एक अपने अनुयायी के यहां विश्राम नहीं किया जिससे इन दो कबीलों में जरा सी भी प्रतिद्वंदिता जन्म न ले सके यद्यपि इस्लाम ग्रहण करने पर इन दो कबीलों की पारम्परिक शत्रुता एकदम समाप्त हो चुकी थी। अब मदीने में सब मिलाकर उनके अनुयाइयों की संख्या सैकड़ो में हो गई। मोहम्मद साहब मदीने में सीधें प्रवेश न कर उससे लगे कोबा नामक स्थान पर **28 जून 622 ई0** को पहुंचे। वहां वह कोबा के एक विशिष्ट नागरिक कुलसूम के स्थान पर ठहरे जो पहले भी मक्का से आये हुए अनेक शरणार्थियों को शरण दे चुका था और मोहम्मद साहब का अनन्य प्रेमी और भक्त था।

कोबा में मोहम्मद साहब चार दिन ठहरे। वहां ठहरकर उन्होंने मदीने की स्थिति का गूढ़ जायजा लिया और चार दिन के पश्चात मदीने के लिए प्रस्थान किया।

मदीने में उनके स्वागत की विशेष तैयारियां की गयी थी। प्रत्येक सम्मानित व्यक्ति उन्हें अपने यहां ठहराना चाहता था। मोहम्मद साहब ने अपने ठहरने का स्थान स्वयं न चुनकर अपने ऊंट 'अलकवासा' पर छोड़ दिया। वह जहां बैठ गया उसके पास का मकान अबु अय्यूब का था। वहीं मोहम्मद साहब ने डेरा डाला। बाद में इस स्थान की आस पास

की भूमि को मस्जिद बनाने के लिए खरीद लिया गया। यद्यपि भू स्वामियों ने उक्त भूमि को दान देने की पेशकश की परन्तु मोहम्मद साहब ने इसे स्वीकार नहीं किया। इस मस्जिद की नीव मोहम्मद साहब ने स्वयं रखी।

मदीने में इन लोगों को मुजाहिर ण्ण धर्म के नाम पर अपना देश छोड़ने वाले ण्ण्ण कहा गया और मदीना के मुसलमानों को अन्सार ण्ण सहायक ण्ण्ण। मक्का से आये इन मुजाहिरों का मदीने में उत्साहपूर्वक प्रेम से स्वागत हुआ। मदीना के मुसलमानों ने इनको अपने घरों में ठहराया। उनके खाने पीने की पूर्ण व्यवस्था की और सगे भाइयों की तरह ही अपनी सम्पत्ति भी उनको बराबर बराबर बांट दी। **इस इस्लामी बंधुत्व की इन्तहा का एक उदाहरण यह भी है कि एक मदीना निवासी साद ने अपने मेहमान अर्ब्दुरहमान के लिए अपनी दो बीवियों में से एक को जिसे भी उसने पसन्द किया तलाक देकर अपने मेहमान के साथ उसका निकाह पढ़्वा दिया।** मोहम्मद साहब ने इस पर कोई अप्रसन्नता प्रकट नहीं की।

इस स्थान पर भारत में घटी तीन घटनाओं का वर्णन प्रासंगिक होगा। 1831 ई0 में सैयद अहमद शहीद के नेतृत्व में भारत के कुछ मुसलमान सिक्खों के विरुद्ध जिहाद के इरादे से अफगानिस्तान चले गये थे। वहां के निवासियों ने उनकों अपना खलीफा भी मान लिया था और उनके साथ सिक्खों के विरुद्ध जिहाद में शामिल हो गये थे। यह भारतवासी मुसलमान अपनी स्त्रियों को साथ नहीं ले गये थे। मदीने की भांति इन लोगों ने पठानों से यह अपेक्षा की कि वह अपनी बेटियां इन मुजाहिरों के साथ व्याह दें। पठानों में इसकी कठोर प्रतिक्रिया हुई और उन्होंने इन लोगों में से कुछ को मार डाला और शेष को भगा दिया।(डब्लू. डब्लू. हंटर : इण्डियन मुसलमान्स पृ0 10)

दूसरी घटना खिलाफत आन्दोलन के समय हुई। उस समय भी कुछ लोग भारत को छोड़कर इस्लामी देश अफगानिस्तान को हिजरत ण्ण चले ण्ण्ण कर गये। किन्तु इनकी आशा के विपरीत वहां इन मुजाहिरों के साथ बहुत बुरा व्यवहार हुआ और अन्त में वहां से लुटे पिटे यह मुसलमान भारत वापस आ गये।

तीसरी इसी प्रकार की घटना 1947 में भारत विभाजन के समय हुई। उस समय भी अनेक मुसलमान भारत छोड़कर मुस्लिम नवनिर्मित देश पाकिस्तान चले गये। आज 54 साल बाद भी वह मुजाहिर कहलाते है और पंजाबी और सिन्धी मुसलमानों के बराबर नागरिक अधिकार पाने के लिए कठोर आन्दोलन चला रहे है। मुस्लिम बन्धुत्व के इन तीन उदाहरणों से यदि पाकिस्तान से भागकर आये हुए हिन्दू और सिख शरणार्थियों की तुलना की जाये तो यह कितना आश्चर्यजनक लगता है कि किस प्रकार विभाजन के तुरन्त पश्चात इन शरणार्थियों को हिन्दू समाज ने प्रेम पूर्वक अपना लिया और वह यहां के समाज में स्थानीय हिन्दुओं से भी अधिक सम्पन्न हो गये। न केवल इतना ही अपितु जो मुसलमान भी पाकिस्तान चले गये थे उनकों भी वापिस आने पर किसी प्रकर की असुविधा का सामना करना नहीं पड़ा।

मदीने की संधि

इस समय के आसपास मोहम्मद साहब ने मदीने के यहूदियों के साथ एक संधि की। इस संधि की ठीक ठीक तिथि का पता नहीं चलता परन्तु सर विलियम म्यौर के विचार से यह संधि मोहम्मद साहब के मदीना पहुंचने के तुरन्त बाद की गयी। कारण यह था कि मोहम्मद साहब यहूदियों को किसी प्रकार अपनी रसूल और कुरान को अल्लाह के समाचार में विश्वास कराने के लिए बहुत उत्सुक थे।

हमारे विषय से भी मदीने और हुदैबइया की संधियों का घनिष्ट सम्बन्ध है क्योंकि इन संधियों को हिन्दुओं के समक्ष इस बात के प्रमाण में पेश किया जाता है कि मोहम्मद साहब गैर मुसलमानों के साथ सह अस्तित्व और शान्ति के समर्थक थे। इन संधियों पर हम आगे चलकर विचार करेंगें।

मदीने की संधि की मुख्य शर्ते इस प्रकार है :-

1. मुस्लिम शरणार्थी अपने युद्ध बन्दियों को छुडानें के लिए स्वयं धन अदा करेंगे।
2. **किसी काफिर के वध के आरोप में किसी मुस्लिम का वध नहीं किया जायेगा।**

नोट : मुस्लिम जगत में आज भी यह भावना व्याप्त है कि किसी काफिर के मुसलमान द्वारा वध पर मुसलमान को कोई दण्ड नहीं दिया जा सकता। भारत में नथरामल के वध पर मुसलमान आरोंपी को मृत्युदण्ड से बचाने के लिए न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया था परन्तु न्यायालय द्वारा इसकों स्वीकार नहीं किया गया। इसी प्रकार 1910 ई0 में मिस्त्र निवासी बुत्रौस पाशा का एक मुसलमान द्वारा वध किया गया। कारण कोई वैयक्तिक रंजिश नहीं थी। पाशा का जुर्म यह था कि उसने एक ऐसे न्यायालय का सभापतित्व किया था जिसमें देनसावाल गांव के कुछ अपराधियों को दण्ड दिया गया था। पाशा के हत्यारे के विरुद्ध सशक्त प्रमाण सिद्ध हो गये थे किन्तु मिस्त्र के मुख्य काजी ने निर्णय दिया कि

इस्लाम में मुस्लिम द्वारा गैर मुस्लिम की हत्या करना कोई अपराध नहीं है। सरकार हिस्ट्री आंफ औरंगजेब भाग 3 पृ0 168)

3. **किसी मुस्लिम के विरुद्ध किसी काफिर को सहायता नहीं दी जायगी।**
4. जो यहूदी हमारा साथ देंगें हम उनकी सहायता करेंगे। उन्हें हानि नहीं पहुचायी जायेगी। उनके शत्रुओं को सहायता नहीं दी जायेगी।
5. कोई गैर मुस्लिम मक्का के गैर मुस्लिमों की सहायता नहीं करेगा। न धन से न शरीर से।
6. शत्रु के साथ युद्ध का खर्चा यहूदी और मुसलमान बराबर बराबर उठायेंगे।
7. **यहूदी अपने धर्म का पालन करेंगें और मुसलमान अपने धर्म का।**
8. **आपस के झगड़ों को निपटानें के लिए मोहम्मद साहब पंच होंगे और उनका फैसला अन्तिम होगा।**
9. मक्का निवासियों के साथ कोई संधि नहीं की जायेगी।

मदीनें में मोहम्मद साहब का स्वागत एक शहंशाह की भांति हुआ। उनके स्वागत के लिए भारी भीड़ उमड़ पड़ी थी। प्रत्येक व्यक्ति उनको पास से देखने को उत्सुक था। बच्चे चिल्ला रहे थे रसूल अल्लाह आ गये रसूल अल्लाह आ गये। अजीब दृश्य था। जिस व्यक्ति को कुछ दिन पहले अपने जन्म स्थान मक्का में अपनी और अपने अनुयाइयों की जान बचाने के लिए वहां से लुकछिप कर भागना पड़ा था वही व्यक्ति आज मदीना निवासियों का हृदय सम्राट बन गया था।

आक्रामकता की नीति का प्रारम्भ

मदीना पहुंचकर मक्का के व्यवसाई कारवाओं पर छापे मारने की मोहम्मद साहब की रणनीति का औचित्य सिद्ध करते हुए कुरान मजीद के हिन्दी अनुवादक मोहम्मद फारुक खां अपने अनुवाद के 345 वें पृष्ठ पर कहते है : कि कुरैश पर दबाव डालने के लिए इसके सिवा और कोई उपाय न था कि मुसलमान उस रास्ते पर कब्जा कर लें जिससे होकर कुरैश के काफिले शाम को जाया करते थे। नबी सल्ल0 ने इस रास्ते के निकट बसने वाले विभिन्न कबीलों से कई प्रकार के समझौते किये। और फिर कुरैश के काफिलों को धमकी देने के लिए छोटे छोटे दस्ते भी भेजे कुछ दस्तों के साथ आप सल्ल0 स्वयं भी गये। कुरान मजीद हिन्दी व अग्रेजी अनुवाद मकतबा अल हसनात 2241 कूपा चेलान दरियागंज दिल्ली 110002)

समय के इस बिन्दु पर एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि मक्का निवासियों के सीरिया आने जाने वाले कारवां मार्ग पर कब्जा करने के लिए इस आक्रामक कार्यवाही करने का क्या औचित्य था? मक्का से मदीना आने वाले अधिकांश मुसलमानों के परिवार मक्का में ही रह रहे थे। उनके साथ मक्का निवासियों ने कोई अभ्रद व्यवहार नहीं किया था। फिर क्या इस कार्यवाही का कारण मक्का काल में कुरैश द्वारा मोहम्मद साहब और उनके कुछ अनुयाइयों पर किये गये अत्याचारों को बदला लेने की भावना थी अथवा उस मार्ग पर राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित करना इसका ध्येय था।

हमारे विचार से केवल इसी एक घटना से इस बुनियादी प्रश्न का उत्तर मिल जाता है कि आगे चलकर विश्व इतिहास के शान्तिकाल में शान्तिप्रिय गैर मुस्लिम देशों पर उनके द्वारा बिना किसी उत्तेजनात्मक कार्यवाही के मुस्लिम आक्रमण और अत्याचार क्यों किये गये?

हमें नही भूलना चाहिए कि इस्लाम मजहब का बुनियादी सिद्धान्त है कि मानव जाति को अल्लाह ने केवल इसलिए पैदा किया है कि वह एक मात्र अल्लाह की ही इबादत करे। अपनी जीविका को उसी के भरोसे समझते हुए इस प्रकार के कार्य करता रहे जो अल्लाह को प्रिय है और जिनका विवरण कुरान में विस्तार से कर दिया गया है। इसमें भी मध्य कार्य है उन लोगों को इस्लाम के सीधे रास्ते पर लाना जो अल्लाह द्वारा बताये गये मार्ग से थोड़ा भी विचलित हो गये है। यदि वह सीधा मार्ग बताये जाने के उपरान्त भी इस मार्ग को स्वीकार न करें तो वह अल्लाह के घोर शत्रु है। उनको सत्य मार्ग इस्लाम पर लाने के लिए प्रत्येक मुसलमान का कर्तव्य हो जाता है कि वह जिहाद करे जिसमें बतौर आखिरी उपाय उनको वध कर देना है। इस्लाम के अवतीर्ण होने और उनके पास पहुंचने के पश्चात भी उसकी अवज्ञा करना अल्लाह और उसके पैगम्बर के विरुद्ध विद्रोह की घोषणा से कम नहीं है। मदीना पहुंचकर जैसे ही अल्लाह के पैगम्बर को फुर्सत मिली उन्होंने अपने इस दायित्व को पूरा करने के लिए प्रयास प्रारम्भ कर दिया।

मदीना काल में शक्ति सम्पन्न हो जाने के बाद ही वह आयतें उतरी जिन्होंने पूरी मानवता को निरंतर युद्धरत शैतान की पार्टी और अल्लाह की पार्टी में विभाजित कर दिया :

'..............ये ण्ण गैर मुस्लिम ण्ण्ण शैतान की पार्टी है। सुन लो शैतान की पार्टी ही घाटा उठाने वाली है। ण्ण कुरान 58:19 ण्ण्ण

'..............ये ण्ण मुसलमान ण्ण्ण अल्लाह की पार्टी है। सुन लो अल्लाह की पार्टी ही सफलता पाने वाली है ण्ण कुरान 58:22 ण्ण्ण

मानवता को इस प्रकार दो निरन्तर युद्धरत कैम्पों में बाटंने के पश्चात इस्लाम विश्व संस्कृतियों का विभाजन भी इसी आधार पर करता है। इस्लाम के अवतरण से पहले की सभी संस्कृतियों और इस्लाम के अवतरण के बाद संसार की दूसरी सभी गैर इस्लामी संस्कृतियों जहीलिया (ignorance) की संस्कृतियों मानी जाती है। केवल इस्लामी संस्कृति ही ज्ञान युक्त संस्कृति मानी जाती है। शहीद आलिम मिश्र निवासी सयद कुत्व जिनका साहित्य अमरीकी मुसलमानों द्वारा विशेष रुप से पढ़ा जाता है कहते हैः

' ण्ण विश्व में ण्ण्ण दो प्रकार की संस्कृतियां मानी जाती है। केवल इस्लामी संस्कृति जिसका आधार इस्लाम का सर्वव्यापी दृष्टिकोण है और जहीली संस्कृति ....' ण्ण जांन0 एल0 एसपासिटोः वायसेज आंफ रिसर्जेन्ट इस्लाम आक्सफोर्ड पृष्ठ 86 ण्ण्ण .... जहीली संस्कृतियों में भारत जापान फिलीपाइन्स अफ्रीका की बहुदेवतावादी और ईसाइ तथा यहूदी राष्ट्रों की संस्कृतियां है ण्ण पूर्वोद्धृत ण्ण्ण .... जो व्यक्ति भी मुस्लिम होना चाहता है उसे यह समझना अत्यावश्यक है कि वह गैर इस्लामी वातावरण में रहकर इस्लामी आचरण नहीं कर सकता। इसके लिए इस्लाम का सर्वशक्ति सम्पन्न होना आवश्यक है। पूर्वोद्धृत पृष्ठ 107)

जिहाद और इस्लामी आतंकवाद–

नमाज, रोजा, जकात और हज्ज इस्लाम के चार स्तम्भ के साथ साथ जिहाद भी इस्लाम का पांचवा स्तम्भ माना जाता है।

ब्रिगेडियर एस0 के0 मलिक अपनी पुस्तक द कुरानिक कन्सेप्ट आंफ वार मे जिसकी भूमिका जनरल मोहम्मद जियाउल हक पाकिस्तान के सैनिक राष्ट्रपति द्वारा लिखी गयी है पृष्ठ 54 पर जिहाद के विषय में लिखते है कि जिहाद को भ्रमवंश कभी कभी सैनिक नीति समझ लिया जाता है। वास्तव में जिहाद एक सम्पूर्ण नीति है जिसमें शक्ति का प्रयोग किया जाता है। इसमें वह सभी उद्योग शामिल है जिनसे विश्व में इस्लाम का वर्चस्व और शरीयत शासन स्थापित किया जा सके। जबकि सैनिक नीति का सम्बन्ध केवल बल प्रयोग और उसकी तैयारी से उसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए है। जिहाद एक निरन्तर कभी भी समाप्त न होने वाली जद्दोजहद है जो सभी मोर्चो पर लडी जाती है– राजनीतिक आर्थिक सामाजिक मानसिक घरेलू नैतिक और आध्यात्मिक मोर्चो पर जब तक कि ध्येय प्राप्ति न हो जाय। इसका उद्देश्य इस्लामिक राज्य का सम्पूर्ण ध्येय प्राप्त करना है और सैनिक कूटनीति उस ध्येय को प्राप्त करने के लिए अनेक उपायों में से एक उपाय है। यह जद्दोहद वैयक्तिक सामुदायिक आन्तरिक और वाहृमा सभी मोर्चो पर लड़ी जाती है।

इस्लामी जिहाद में आतंक की भूमिका

ब्रिगेडियर मलिक इसी पुस्तक के पृष्ठ 59 और 60 इस्लामी युद्ध में आतंक की भूमिका पर अपने विचार खुलकर प्रकट करते है उनका कहना है शत्रुओं के ह्रदय को आतंकित कर देना केवल साधन ही नहीं है वह साध्य ही है। यदि शत्रु को आतंकित कर दिया जाय तो फिर कुछ करना शेष रह ही नहीं जाता। यह एक ऐसा बिन्दु है जहां साधन और साध्य एक हो जाते है। आगे चलकर मलिक कहते है कि शत्रु को आतंकित करने का सर्वश्रेष्ठ उपाय है उसके विश्वास को नष्ट कर देना। .... पवित्र कुरान हमकों आतंकित न होने की शक्ति प्रदान करती है और साथ ही साथ शत्रु को आतंकित कर देने की शक्ति भी हमें प्रदान करती है। **शत्रु के विरुद्ध कोई भी रणनीति क्यों न अपनाई जाय प्रभावशाली होने के लिए उसमें शत्रु को आतंकित करने की शक्ति अवश्य होनी चाहिए।**

जिहाद के विषय में सैयद कुत्व का कहना है कि इस्लाम में न्यायोचित युद्ध केवल वही है जिसका उद्देश्य अल्लाह के संदेश इस्लाम का विश्व में वर्चस्व और अल्लाह की हुकूमत इस्लामी हुकूमत को तमाम विश्व में स्थापित करना है। ण्ण पूर्वोद्धृत पृष्ठ–85 ण्ण्ण

कुत्व उन सभी लोगों की निन्दा करते है जो जिहाद को उसके वास्तविक उद्देश्य सभी गैर इस्लामी राज्य व्यवस्थाओं को नष्ट करने से अलग करने में विश्वास करते है। ऐसे लोग भूलवश यह समझते है कि वह इस प्रकार के प्रचार द्वारा इस्लाम की सेवा कर रहे है।..........कुरान ने जब जब मुसलमानों को जिहाद से कुछ समय के लिए रोका वह एक रणनीति के अनुसार था सिद्धान्तवश नहीं। ण्ण पूर्वोद्धृत पृष्ठ 85)

हमें नहीं भूलना चाहिए कि मोहम्मद साहब का अथवा कहिये उनके द्वारा उद्घोषित अल्लाह का एक ही ध्येय है : अल्लाह के अतिरिक्त दूसरे सभी उपास्यों की पूजा का पूर्ण उन्मूलन और इस्लामी कानून के अनुसार राज्य की स्थापना।

इस ध्येय को प्राप्त करने के लिए गैर इस्लामी पूजाग्रहों पाठशालाओं और पुस्तकालयों का विध्वंस अनिवार्य था क्योंकि इन स्थलों से कुफ्र का प्रचार होता है। मूर्ति पूजक जो किसी प्रकार भी मूर्ति पूजा छोड़कर इस्लाम स्वीकार नहीं करतें उनका वध ही एकमात्र विकल्प रह जाता है। इस प्रकार की बलात कार्यवाही के विरुद्ध विद्रोह होना भी अनिवार्य है। उस विद्रोह को दबाने के लिए रक्तपात लूट पाट मार और आतंक के बिना काम नहीं चलता। इस धारणा को अनेक मुस्लिम धर्माचार्यो ने स्वीकार किया है। उनमें से हम कुछ के उद्धरण देकर अपने कथन की पुष्टि करना चाहेंगे।

डां. अली ईसा उस्मान यू. एन. आर. डब्लू. ए. के कई वर्षो तक शिक्षा सलाहकार रहे है। लांग मैन द्वारा 1976 में प्रकाशित द मुस्लिम माइण्ड पुस्तक में वह लिखते है : इस्लाम का प्रसार सदैव सैनिक रहा है। इसके लिए किसी क्षमा याचना की आवश्यकता नहीं है। कुरान इस बात पर बल देती है कि उसकी स्थापना के लिए युद्ध करना आवश्यक है।

मक्तबा अल हसनात नई दिल्ली से प्रकाशित कुरआन मजीद के हिन्दी अनुवादकर्ता मुहम्मद फारुक खां साहब अपने अनुवाद में लिखते है इस्लामी जीवन व्यवस्था एक पूर्ण प्रणाली है। उस प्रणाली को स्थापित करने के लिए गैर इस्लाम से केवल उसकी रक्षा करना ही पर्याप्त नहीं है। एक समय ऐसा भी आता है जब उसकी स्थापना के लिए उसके विरोधियों को पूर्णतया नष्ट करने के लिए आक्रमण आवश्यक हो जाता है।

सैयद अबू आला मौदूदी जमाते इस्लामी के संस्थापक और इस्लाम के विश्व विख्यात विद्वान फर्माते है : इस्लाम केवल एक विश्वास और भजनाकें का संग्रह नहीं है। यह पूर्ण जीवन व्यवस्था सबकों न्यौता देता है। **जो अपना सुधारात्मक प्रोग्राम स्थापित करना चाहता है।** इस ध्येय की पूर्ति के लिए यह सबको न्यौते देता है। जो इस न्यौते को स्वीकार कर लेते है वह इस्लामी जमात के सदस्य बन जाते है। **जैसे ही यह पार्टी अस्तित्व में आती है यह उस कार्य के लिए जिहाद प्रारम्भ कर देती है जो इसके अस्तित्व में आने का मकसद है अर्थात गैर इस्लामी शासन को उखाड़ फेंकना और उसके स्थान पर अल्लाह का शासन स्थापित करना। वे मुसलमान प्रचारकों और मिशनरियों का दल नहीं है। अपितु ण्ण जिहाद के लिए ण्ण्ण खुदा की फौज है।**

सैयद कुत्व मिस्त्र के विख्यात शहीद मुस्लिम धर्माचार्य जिहाद को एक व्यवहारिक सिद्धान्त मानते है जिसे मुसलमानों द्वारा कभी भी त्यागा नहीं जाना चाहिए। **वह उन आधुनिक मुसलमानों की भर्त्सना करते है जो जिहाद को केवल रक्षात्मक सिद्ध करने के लिए लम्बे लम्बे लेख लिखते है। कुत्व ऐसे व्यक्तियों को आध्यात्मिक और बौद्धिक पराजयवादी कहते है। जो समझते है कि जिहाद को रक्षात्मक सिद्ध करने से वह इस्लाम की सेवा कर रहे है। वास्तव में वह इस्लाम से एक ऐसे सिद्धान्त को छीनने का प्रयास करते है जो कि सभी आधुनिक गैर इस्लामी राजनीतिक दर्शाने को नष्ट करने में विश्वास करता है।** उनका कहना है कि अल्लाह ने जब जब भी मुसलमानों को जिहाद से कुछ समय के लिए रोका तो वह एक सूझी समझी रणनीति के तहत था सिद्धान्त के तहत नहीं।

कभी कभी यह भी कहा जाता है कि कुरान की अनेक आयतें जो आक्रामक लगती है वह युद्ध काल के लिए है शान्ति काल के लिए नहीं। इस भ्रम को दूर करने के लिए केवल एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा। जब अलाउद्दीन खिलजी का निर्विरोध शासन स्थापित हो चुका था और उसके कथानानुसार उसकी एक हुंकार पर उसकी प्रजा के हिन्दू लोग चूहों की तरह बिल में घुसने को तैयार थे तो उसने अपने दरबारी काजी मुघीसुद्दीन से पूछा कि **उसका व्यवहार अपनी हिन्दू प्रजा के प्रति कैसा होना चाहिए?** मुघीसुद्दीन ने इस भय से कि सुल्तान नाराज होकर उन्हें प्राणदण्ड न दे दें सुल्तान से कहा कि दीनी मामले में मै सच सच उत्तर दूंगा तो आप क्रोधित होकर मेरी हत्या करा देंगे। अलाउद्दीन ने कहा : मै तेरी हत्या नहीं कराऊंगा किन्तु जो कुछ पूछूं

उसके विषय में सच सच उत्तर देना। तब अलाउद्दीन ने उससे पूछा कि हिन्दूओं के साथ उसका क्या व्यवहार होना चाहिए। काजी ने उत्तर दिया हिन्दुओं के विषय में इस्लामी शरियत की आज्ञा यह है कि जब सरकारी कर जिजिया वसूल करने वाला उनसे चांदी मांगे तो वे बिना सोंचे समझे बड़े आदर सम्मान और विनम्रता से सोना अदा कर दें। यदि कर वसूल करने वाला उनके मुंह में थूकना चाहे तो वह बिना कोई आपत्ति किये मुंह खोल दें जिससे वह उनके मुंह में थूक सके। उस दशा में भी वह कर वसूल करने वाले की आज्ञाओं का पालन करते रहे। इस प्रकार अपमानित करने कठोरता बरतने तथा थूकने का उद्देश्य यह है कि इससे उसका अत्यधिक आज्ञाकारी होना सिद्ध होगा। इस्लाम का सम्मान बढ़ाना आवश्यक है। दीन का अपमानित करना बहुत बुरा है। खुदा हिन्दुओं को अपमानित रखने के विषय में इसी प्रकार कहता है। विशेषकर हिन्दुओं को अपमानित करना दीन के लिए अत्यावश्यक है कारण है कि वे पैगम्बर साहब के दुश्मनों में सबसे बड़े दुश्मनों में सबसें बड़े दुश्मन है। पैगम्बर ने हिन्दूओं के विषय में यह आदेश दिया है कि उनकी हत्या करा दी जाय। उनकी तमाम सम्पत्ति लूट ली जाय अथवा उन्हें बन्दी बना लिया जाय। या तो उनसे इस्लाम स्वीकार कराया जाय अथवा उनकी हत्या करा दी जाय। और उनकी सब सम्पत्ति छीन ली जाय।

जिहाद

अन्तर्देशीय ख्याति प्राप्त इस्लामी पुस्तकों के भारतीय विक्रेता किताब भवन नई दिल्ली 110002 द्वारा प्रकाशित हिदाया के चार्ल्स हैमिल्टन द्वारा अंग्रेजी अनुवाद में इस्लाम के प्रति अविश्वास रखने वाले लोगों के विरुद्ध युद्ध के विषय में जो व्यवस्थाएं दी गयी है उनके निम्नलिखित हाशियें मार्जिन के शीर्षक इस संदर्भ में काफी प्रकाश डालते है।

1. इस्लाम पर विश्वास न लाने वालों के विरुद्ध मुसलमानों के किसी न किसी दल द्वारा हर समय युद्ध अवश्य किया जाना चाहिए। ण्ण खण्ड – 2 पृ0 140 ण्ण्ण
2. इस्लाम पर विश्वास न लाने वालों के ऊपर बिना किसी कारण भी आक्रमण किया जा सकता है। ण्ण उपरोक्त पृ0 – 142 ण्ण्ण

श्री एस. ए. एच. रिजवी अपनी पुस्तक बैटिल्स बाइ द प्राफेट पृ0 119 पर कुरान सूरा 9 आयत 38 से 41 तक का सन्दर्भ देकर कहते है कि **इन आयतों के 9 हिजरी के आस पास मोहम्मद साहब की मृत्यु से लगभग 1 वर्ष पहले अवतीर्ण होने पर मुसलमानों को यह अनिवार्य कर दिया गया है कि जब किसी इस्लामी शासक द्वारा जिहाद की घोषणा कर दी जाय तो प्रत्येक मुसलमान का जो शारीरिक रुप से सक्षम है कर्तव्य है कि वह उसमें भाग लेने के लिए निकल पड़े।**

वास्तविक स्थिति का जायजा लेते हुए ए. आर. ए. बेग साहब अपनी पुस्तक द मुस्लिम डिलेमा इन इण्डिया में पृ0 15 पर कहते है जब मुसलमान संख्या में कम थे तो कुरान उनको सदैव आक्रामण रुख अख्तियार करने से वर्जित करती है किन्तु बाद में जब उनकी शक्ति बढ़ गयी और अरब में उनका दबदबा कायम हो गया तो लूट का माल और स्त्री बन्दियों के विवरण है। बेग साहब टिप्पणी करते है कि लूट का माल और स्त्रियां सुरक्षात्मक युद्ध से तो बहरहाल प्राप्त नहीं हो सकते?

कुवैत के इंटरनेशनल इस्लामिक फेडरेशन आंफ स्टूडेन्ट आंरगेनाइजेशन ने सयद कुत्व के साहित्य के अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किये है और यह अनुवाद अमेरिका में तमाम मुस्लिम स्टूडेन्ट संगठ्नों में बड़े पैमानों पर पढ़े जाते है।

यही वह कुंजी है जिससे पूरे मुस्लिम इतिहास और मुस्लिम राजनीति के रहस्य खुल जाते है। युद्धो सन्धियों और उनके सुविधानुसार तोड़ने मरोड़ने का महत्व समझ में आ जाता है चाहे वह राजपूतों मराठों और सिक्खों के साथ मुस्लिम शासकों द्वारा की हुई सन्धियां हो अथवा 1916 का लखनऊ पैक्ट अथवा उसके बाद गांधी जी का खिलाफत आन्दोलन के समय मुसलमानों द्वार अपूर्व प्रेम और आदर प्रदर्शन अथवा हमारे समय का देश विभाजन बंगाल मोपला नोआखाली शिमला या लाहौर समझौता या कारगिल युद्ध या अमेरिका पर 11 सितम्बर 2001 के आतंकवादी हमले ध्येय एक ही है भारत और गैर इस्लामी विश्व का योजनाबद्ध पूर्ण इस्लामीकरण और इस्लामी शासन की स्थापना। **इस ध्येय पूर्ति के लिए यह सब भिन्न भिन्न मार्ग है। परिवार नियोजन का विरोध मदरसों का विस्तार और धार्मिक शिक्षा धर्म परिवर्तन के लिए योजनाबद्ध तबलीगी कार्य तालिबानी आतंकवाद सूफियों का प्रचार और साथ ही साथ इस्लाम को शान्तिप्रिय मानवतावादी अहिंसावादी मत सिद्ध करने के लिए विशाल साहित्य का प्रकाशन और वितरण।**

मदीने में इस्लाम का प्रचार

मस्जिद और मोहम्मद साहब के रिहायशी कमरे बनाने का कार्य लगभग 5 मास तक ही चला था कि इससे कुछ फुर्सत पाते ही दिसम्बर 622 ई0 में मदीना पहुंचने के केवल 6 मास बाद ही मोहम्मद साहब ने अपने चाचा हमजा के नेतृत्व में लगभग 30 शरणार्थियों को मक्का निवासियों के कारवां पर जो मक्का से सीरिया को व्यवसाय के लिए जा रहा था। छापा मारने के लिये भेजा। इस मक्का कारवां का नेता अबू जहल था। इसके साथ 300 कुरैश रक्षक थे। युद्ध होने से पहले ही बनी जुहेना नामक कबीले ने जिसके दोनों ओर ही अच्छे सम्बन्ध थे बीच बचाव करवा दिया। हमजा मदीना लौट आये और अबू जहल अपनी राह चले गये। ण्ण म्यौर पृ0 208 ण्ण्ण

एक महीने पश्चात जनवरी 623 ई0 में मोहम्मद साहब ने लगभग 60 शरणार्थियों की सेना के साथ अपने चाचा जाद भाई ओवेदा इब्न अल हारिश को दूसरे छापा मार युद्ध के लिए भेजा। अबू सूफियान के इस कारवा में 200 रक्षक थे। सफलता की आशा न देखकर कुछ दूर से तीर छोड़कर ओबेदा मदीना लौट आये। ण्ण म्यौर पृ0 208 ण्ण्ण

एक महीने बाद साद के नेतृत्व में तीसरा छापामारा दस्ता भेजा गया परन्तु छापे के स्थान पर पहुंचने पर पता चला कि कारवां पहले ही जा चुका था। ण्ण म्यौर पृ0 208 ण्ण्ण

यह तीन छापे 622 623 ई0 में शरद और बसंत ऋतु में मारे गये। इनके पश्चात मोहम्मद साहब ने अपने नेतृत्व में इनसे कुछ बड़े परन्तु असफत छापे 623 ई0 के ग्रीष्म और पतझड़ ऋतु में मारे। ण्ण म्यौर पृ0 208 ण्ण्ण

नवम्बर दिसम्बर 623 ई0 में मोहम्मद साहब स्वयं मदीना में ही रुके रहे। परन्तु उन्होंने अब्दुल्लाह इब्न जहश के नेतृत्व में आठ आदमियों के एक दस्तें को एक कारवां पर छापा मारने के लिये रवाना किया। चलते समय अब्दुल्लाह के हाथ में मोहम्मद साहब ने एक मोहरबंद पत्र दिया और कहा कि जब वह मक्का की ओर दो दिन की यात्रा के बाद एक विशेष घाटी में पहुंचे तभी उस पत्र को खोल कर पढ़े और उसमें लिखे निर्देशों के अनुसार कार्य करें। आठ छापामारों में से दों खोये गये ऊंटो को ढूढंने गये और फिर लौट कर नहीं आये।

उस घाटी में पहुंचने पर अब्दुल्लाह ने पत्र खोल कर पढ़ा। उसमें लिखा था अल्लाह के नाम और उसके आशीर्वाद के साथ नखला जाओ। यदि तुम्हारा कोई साथी तुम्हारा साथ छोड़ना चाहे तो उसके साथ जबरदस्ती मत करना। जो लोग तुम्हारा साथ संहर्ष देना चाहे उनको साथ लेकर ही आगे बढ़ो। जब तुम नखला पहुंच जाओं तब वहां कुरैश के कारवां के इंतजार में घात लगाकर बैठो।

नखला मक्का और तैफ के बीच में मक्का के पूरब में स्थित है। सीरिया जाने वाले कारवां व्यवसाय के लिये यहां होकर जाते थें। म्यौर कहते है कि निश्चय ही मोहम्मद साहब को इस कारवां के वहां से गुजरने की सूचना रही होगी। और मोहरबंद पत्र द्वारा उन्होंने सुनिश्चित कर लिया था। कि मदीने में किसी को भी यह पता न लगे कि छापा कहां मारा गया हो कि उनकी मुहिम का पता मक्का के कारवां को पहले से लग जाता रहा है। अथवा यह उनकी सहज सतर्कता और दीर्घ बुद्धिमता का कमाल था।

बहरहाल नखला पहुंचने के थोड़ी देर बाद ही कारवां आता दिखाई पड़ा। रक्षक केवल चार थे। छापामारों में से एक ने अपना सिर मुंडा रखा था। जिससे यह लगे कि यह लोग मक्का से लौटने वाले तीर्थ यात्री थे क्योंकि यह छोटे हज्ज कासमय था। कारवां के साथ केवल चार रक्षक थे। वह ऐसा ही समझकर निश्चिन्त हो गये। उन्होंने ऊंटों को चरने के लिये छोड़ दिया और अपना खाना पकाले लगे।

कुछ देर तो छापामार इस पशोपेश में पड़ें रहे कि छापा मारा जाय अथवा नहीं क्योंकि ये रजब मदीने का अंतिम दिन था जिसमें प्राचीन काल से अरब निवासियों में युद्ध वर्जित था। यदि वह छापा मारते है तो पवित्र महीनों की अवहेलना होती है जो अक्षम्य सामाजिक और धार्मिक अपराध था यदि छापा नहीं मारते तो कारवां हाथ से निकल जाता।

अंत में लोभ ने विवेक पर विजय पायी। एक छापामार ने चुपचाप आगे बढ़कर बाण से अम्र इब्न अल हद्रामी नामक रक्षक को मार गिराया। फिर चारों ने सहसा हमला करके दो रक्षकों उस्मान इब्न अब्दुल्लाह और अल हाकम इब्न कीसान को गिरफतार कर लिया। चौथा रक्षकर नौफाल बच कर मक्का भाग गया।

लूट का सामान और दो वन्दियों को लेकर यह लोग मदीना पहुंच गये। पहले तो मोहम्मद साहब ने पवित्र महीने के उल्लंघन पर नाराजगी प्रकट की और लूट के सामान तथा कैदियों को अगले आदेश तक अलग रखवा दिया।

म्यौर कहते है कि परन्तु मोहम्मद साहब का अपने अनुयाइयों को पवित्र महीने में छापे मारने से रोकने का अथवा नखला में मिला लूट का वापिस करने का कोई इरादा नहीं था। शीघ्र ही अल्लाह से इसके आदेश भी प्राप्त हो गये।

और युद्ध करो उनसे यहां तक कि फितना मूर्ति पूजा बाकी न रहे और दीन अल्लाह का हो जाय।

वे तुमसे आदर के महीने में युद्ध के बारे में पूछते है? कह दो। उसमें युद्ध बहुत बुरा है परन्तु अल्लाह के मार्ग से रोकना उसका कुफ्र करना मूर्ति पूजा और कावा जाने से रोकना .... और फितना मूर्तिऔर बहुदेवता पूजा रक्त पात से बढ़कर है।

नोट – उपरोक्त आयतों में फितना शब्द आया है। इसका अर्थ मौनाना अब्दुल मजीद दरियावादी ने अपनी तफसीरुल कुरान खण्ड 1 में पृ0 126 पर मूर्ति पूजा की शरारत किया है।

सभी विद्वान इस पर सहमत है कि अम्र इब्न अल हद्रामी की मोहम्मद साहब के अनुयाइयो द्वारा नखला में हत्या के कारण ही कुरैश बदर के युद्ध के लिए मजबूर हो गये थे। हद्रामी मक्का के अति सभ्रान्त और महत्वपूर्ण परिवार का सदस्य था। मोहम्मद साहब के मदीना जाने के बाद कुरैश द्वारा ऐसा कोई कार्य नहीं किया गया था जिससे कुरैश के निर्दोष व्यापारियों पर मुसलमानों द्वारा घात लगाकर हमला हत्या लूट और उनको कैदी बनाकर मदीने ले जाने जैसे कृत्यों को न्यायपूर्ण सिद्ध किया जा सके।

यदि यह कुकृत्य मोहम्मद साहब के सिद्धान्तों के विपरीत किये गये थे तो उनके लिए दोषी जनों को दण्ड देकर अथवा कम से कम उनके प्रति नाराजगी व्यक्त करने कारवां व्यवसाइयों के प्रति खेद प्रकट करने अरब की प्रथा के अनुसार मृत व्यक्ति का रक्त मूल्य चुकाकर और लूट का माल तथा बन्दियों को सम्मानपूर्वक लौटाकर इस मनोमालिन्य को तत्काल दूर किया जा सकता था। परन्तु ऐसा नहीं किया गया क्योंकि अब अल्लाह और रसूल के बैरियों से लगातार युद्ध की घोषणा कर दी गयी थी।

मुस्लिम इतिहासकार नखला के युद्ध के बहुत महत्वपूर्ण घटना मानते है परन्तु दूसरे कारणों से इब्न हिशाम का कहना है कि यह पहला अवसर था जब मुसलमानों को लूट का माल मिला कैदी पकड़े गये जिनके बदले में धन वसूल किया गया और इस्लाम में किसी गैर इस्लामी व्यक्ति का खून प्रथम बार बहाया गया इस घटना की निन्दा करने के बजाय इसके नायक अब्दुल्लाह को अमीर अल मोमिनीन मुसलमानों का कमाण्डर कहा गय जो इसके पश्चात मुस्लिम खलीफाओं के नाम के साथ आदरसूचक रुप में जुड़ गया। फिर तो अल्लाह ने ही पवित्र महीनो में इस प्रकार के खूनी जिहाद की अनुमति आदेश दे दिया।

मोहम्मद साहब और उनके साथियों को मक्का छोड़े लगभग डेढ साल हो गया था। मक्का निवासियों के प्रति उनका व्यवहार दिन प्रतिदिन आक्रमाक होता जा रहा था पिछले कुछ समय से मक्का के कारवाओं को लूटने का कोई भी अवसर हाथ से नहीं गंवाया गया था। इन कारवाओं द्वारा व्यवसाय ही मक्का निवासियों का जीवन आधार था मुस्लिम छापामारों की दृष्टि में न जीवन के प्रति सम्मान था न पवित्र महीनों के प्रति।

नखला की घटना से मक्का में तीव्र प्रतिक्रिया हुई जो स्वाभाविक थी। छद्‌म रुप में तीर्थ यात्री बनकर पवित्र महीनों में जबकि रक्तपात और लूट मार वर्जित थी घात लगाकर मक्का के एक अति प्रतिष्ठित नागरिक का वध किया गया था दो व्यकितयों को बन्दी बना लिया गया था। उनके बदले में फिरौती की मांग की जा रही थी उनका पूरा तिजारती माल लूट लिया गया था। फिर भी मक्का निवासियों ने असामान्य धैर्य का परिचय दिया था मक्का में रह रहे मोहम्मद साहब औेर उनके अनेुयाइयों के परिवारों के विरुद्ध कोई हिंसात्मक कार्यवाही नहीं की गयी थी। किन्तु बीच की खाई निरन्तर बढ़ती जा रही थी। शत्रुता गहरी होती जा रही थी और अरब निवासियों के आत्म सम्मान की रक्षा का सर्वसम्मत सिद्धान्त खून का बदला खून लोगों को उद्वेलित कर रहा था।

मदीेन में भी नखला की घटना के बाद मक्का के प्रभावित लोगों से शान्ति स्थापित करने के प्रयासों के विपरीत जोर शोर से आर पार युद्ध की सम्भावना पर लगातार गम्भीर विचार किया जा रहा था। कुरैश के कारवाओं पर बार बार औश्र लगातार हमलों से इस प्रकार के युद्ध की सम्भावना बढ़ती जा रही थी। अल्लाह की सहमति और युद्ध में दैवी सहायता के संदेश से मुसलमानों का साहस और आकांश आकाश छूने लगी थी।

इजाजत दी गयी उन लोगों को जिनसे लड़ाई की जाती है। इसलिए कि उन पर जुल्म किया जाता है। और निसंदेह अल्लाह उनकी सहायता का पूरा सामर्थय रखता है।

नोट : मौलान मोहम्मद फारुक खां कुरान मजीद की हिन्दी टीका में फर्माते है। कि अल्लाह की राह में लड़ने मूर्तिपूजा को नष्ट कर केवल इस्लाम धर्म को स्थापित करने के बारे में आदेश दियो जाने से सम्बन्धित यह प्रथम आयत है। इसके पश्चात सूरा बकरा में इस विषय पर दूसरी आयते ंउतरी है।

तुम पर युद्ध फर्ज किया गया और वह तुम्हें अप्रिया है और हो सकता है एक चीज तुम्हें बुरी लगे और वह तुम्हारी लिए अच्छी हो और हो सकता है कि एक चीज तुम्हें प्रिय हो और वह तुम्हारे लिए बुरी हो। अल्लाह जानता है और तुम नहीं जानते।

इसके पश्चात तो अल्लाह के आदेश ईमान वालों को निरन्तर युद्ध के लिए प्रेरित और उत्साहित करते है। लूट के माल को अनेक प्रकार से उचित ठहराते है। अब मदीने का अल्लाह मक्का का सौम्य शान्तिमय प्रचार की वकालत करने वाला अल्लाह नहीं रहा। अब वह गैर मुसलमानों के लिए साक्षात काल मूर्ति पूजकों को सदैव यंत्रणाये देने वाला युद्ध में मुसलमानों की विजय सुनिश्चित करने के लिए सहस्त्रों फरिश्तों की सेना भेजने को सदैव उद्यत विजय के उपरांत युद्ध बन्दी लेने से पहले कत्ले आम की आज्ञा देकर आतंकित करने वाला अल्लाह है जिससे शेष युद्ध बन्दियों को जान बचाने के लिए मुसलमान बनने की श्रेष्ट बुद्धि आ जाय ।

किसी नबी को कैदी पकड़ने की इजाजत नहीं है। जब तक कि वह पहले धरती पर कत्लेआम न कर दे। तुम लोग दुनिया की सुख सामग्री लूट और फिरोती चाहते हो और अल्लाह आखिरत चाहता है और अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।

जो कुछ गनीमत लूट तुमने हासिल की है उसे हलाल और पाक समझ कर खाओं और अल्लाह से डरते रहो। निस्संदेह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है।

हे नबी । जो कैदी तुम्हारे कब्जे में है उनसे कह दो कि यदि अल्लाह ने जाना कि तुम्हारे दिलो में कुछ भलाई है तो वह तुम्हें उससे बढ़ चढ़ कर देगा जो तुम से लिया गया है और तुम्हें क्षमा कर देगा। और अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है।

अब युद्ध में विजय प्राप्त कर लेना और युद्ध बन्दियों को फिरौती के लिए पकड़ लेना ही पर्याप्त नही है। युद्ध बन्दियों को आतंककित करना भी आवश्यक है जिससे वह इस्लाम ग्रहण करने के लिए तैयार हो जाये।

अब जब कुफ्र करने वालो से तुम्हारी मुठभेड़ हो तो गर्दन मारना यहां तक कि जब तुम उन्हें कुचल चुकों तो बन्धनों में पकड़ों फिर आद में या तो एहसान कर देना है या फिरौती लेना है यहां तक कि युद्ध में अपने हथियार डाल दें ....।

नोट – मुस्लिम सैनिक कैदियों के मुकाबले युद्ध बन्दियों द्वारा इस्लाम स्वीकार करना फिरौती से अधिक महत्वपूर्ण समझते थे। उपरोक्त आयात में इसी ओर संकेत किया गया है।

काफिरो से इस प्रकार युद्ध करने से प्राप्त होने वाले लाभों को भी अल्लाह गिनाता हैः

और बहुत सा लूट का माल जो तुम्हारे हाथ आएगा। और अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।

अल्लाह ने तुमसे बहुत से लूटों का दावा किया है। जो तुम्हारें हाथ आयेंगें............।

और दूसरी भी है जिन पर तुम सफल नहीं हो सके अल्लाह उनकों तुम्हें दिलायेगा और अल्लाह हर चीज का सामर्थ्य रखता है।

और ईमान लाने वाले कहते है कोई सूरा क्यों नहीं उतारी गई? फिर जब कोई असंदिग्ध सूरा उतारी जाती है और उसमें युद्ध करने की बात होती है। तो तुम उन लोगों को देखते हो जिनके दिलों में निफाक को रोग है कि वे तुम्हारी ओर ताकते है जैसे कि उन पर मौत की बेहोशी छायी है। तो अफसोस है उन पर।

हे नबी । ईमान वालों को लड़ाई पर उभारो। यदि तुम में बीस जमें रहने वाले होंगे तो वे दो सौ पर प्रभुत्व प्राप्त करेंगें और यदि तुम में सौ हो तो वे एक हजार काफिरों पर भारी रहेंगें क्योंकि वे ऐसे लोग है जो समझ बूझ नहीं रखतें।

अब अल्लाह ने तुम्हारा बोझ हल्का कर दिया और उसने जाना कि तुम में कमजोरी है। तो यदि तुम में सौ जमे रहने वाले होंगे तो वे दो सौ पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेंगें और यदि तुम में हजार होंगें तो दो हजार पर अल्लाह के हुक्म से भारी रहेंगें। और अल्लाह उन लोगों के साथ है जो जमे रहले है।

पश्चिमी विद्वानों द्वारा कुरैश के इन व्यवसाई कारवाओं पर मुस्लिम छापों के विवरण पर मुस्लिम विद्वानों की प्रतिक्रिया का उल्लेख इस स्थान पर करना आवश्यक है जिससे दोनों पक्षों को सुनकर पाठ्क स्वयं यह निर्णय कर सके कि यह छापे मक्का निवासियों द्वारा मुसलमानों को उत्तेजित करने प्रताणित करने के फलस्वरुप थे अथवा मोहम्मद साहब द्वारा गैर मुसलमानों को बलात धर्मान्तरण के लिए मजबूर करने के लिये किये गये थें।

विश्यात मौलाना शिबली नोमानी अपनी पुस्लक सिरातुन नबी भाग 2 में लिखते है।

सभी युरोपियन लेखक मोहम्मद साहब की जीवनी लिखते समय ऐसर दिखाना चाहते है कि इसके बाद मदीना पहुंचने के उपरांत मोहम्मद साहब द्वारा लगातार युद्धों की इस श्रंखलाका ध्येय गैर मुसलमानों का बलात धर्मान्तरण था। यह एक सफेद झूठ है।

नुमानी साहब अपने पक्ष में जो तक्र देते है उनका संक्षिप्त सार निम्नलिखित है।

1. उनका कहना है कि मदीना पहुंचले के कुछ ही दिन पश्चात मकका के कुरैश ने अब्दुल्ला इब्न उब्बै को जो मदीना के मुखियाओं में विशेष स्थान रखता था एक पत्र लिखा :

आपने हमारे व्यक्ति को शरण दी है। हमारा आपसे कहना है कि या तो उसे आप हमकों वापिस कर दें अथव मदीने से निकाल दें। वरना हम अल्लाह की सौगन्ध खाते है कि हम आप पर आक्रमण करेंगें और आपकी स्त्रियों को उठा ले जायेंगें। सही अल बुखारी चैप्टर सैलयूटेशन)

उस समय तक मदीना के अधिकांश अन्सार इस्लाम स्वीकार कर चुके थे। इसीलिये यह सुनकर मोहम्मद साहब अब्दुल्लाह इब्न उब्बै के पास गये और उससे पूछा क्या आप अपने ही पुत्रों और भाइयों से युद्ध करेंगें? मोहम्मद साहब के प्रश्न का महत्व उब्बै की समझ में आ गया और उसने मक्का के लोगों के आदेश का पालन करने से अन्कार कर दिया। बदर के युद्ध के बाद इसी प्रकार का एक दूसरा पत्र कुरैश द्वारा भेजा गया। जिसका कोई असर नहीं हुआ।,

नोट : क्या इस प्रकार की धमकी के उत्तर में मक्का से सीरिया जाने वाले व्यापारिक कारवाओं पर धुआंधार छापों का औचित्य सिद्ध होता है? कुरान इन धमकियों की साक्षी भी नहीं देता यद्यपि वह पवित्र महीनों में युद्ध करने की अनुमति का कारण साफ साफ बयान करती है।

2. एक रोज मोहम्मद साहब मदीने की बस्ती में कही जा रहें थे जहां बनु हारिथ और बनु खजराज की वस्तियां थी। वहां उन्होंने कुछ गैर मुसलमानों को और कुछ हिपोक्राइट्स ऐसे ढोगी लोग जो प्रकट्तः मुसलमान बन गये थे किन्तु ह्रदय से मोहम्मद साहब के विरोधी थे को कुछ मुसलमानों और यहूदियों के साथ बैठे हुए देखा। मोहम्मद साहब के गधे के पैरो से कुछ धूल उड़ रही थ्क्षी जिसके कारण उब्बै ने अपने चेहरे को कपड़े से ढक लिया ओर मोहम्मद साहब से कहा कि इस प्रकर से धूल मत उड़ाइयें। मोहम्मद साहब ने एकत्रित जनों का सलाम किया और कुरान की कुछ आयते पढ़ी। इस पर उब्बै ने कहा ऐ मोहम्मद । मुझे आपका यह व्यवहार पसन्द नहीं। जो कुछ तुम कह रहे हो यदि वह सत्य भी है तब भी आपकों हमारी गोष्ठी में विघ्न नहीं डालना चाहिए और यह उपदेश उन्ही को करना चाहिए जो इसकों सुनने के लिए आपके पास जाये। मोहम्मद साहब के इस आपमान पर मुसलमान बहुत क्रोधित हुये और यह उन्होंने उनको रोका न होता तो अवश्य ही उनके बीच मारपीट हो जाती।

नोट : क्या इस साधारण बाद विवाद से जिमें उब्बै ने मोहम्मद साहब द्वारा गोष्ठी में व्यवधान डालने पर साधरण सी आपत्ति की थ्क्षी मोहम्मद साहब द्वारा मक्का के व्यवसायी कारवाओं पर निरन्तर छापे मारने को औचित्य सिद्ध होता है।

3. बदर के युद्ध से पहले ही साद कबीलें का मुखिया मक्का में तीर्थ यात्रा करने के विचार से मक्का गया। उमैवा इब्न खलफ उसका पुराना मित्र था। और यह मित्रता उन दोनों के बीच साद के इस्लाम ग्रहण करने के पश्चात भी बरकरार थी। इसीलिए मक्का में साद उमैया के साथ ही ठहरा। एक दिन साद उमैया से पूछा तुम्हारे साथ यह कौन है उमैया ने उत्तर दिया यह साद है। अबू जहल ने तब साद से कहा आप लोगों ने हमारे धर्म छोड़ने वालों का शरण दी है। हम आपका अपने मन्दिर काबा में जाना बर्दाश्त नहीं कर सकते। अल्लाह की कसम अगर आप उमैया के साथ न होते तो आप जीवित वापिस घर न पहुंचते साद ने उत्तर दिया यदि आप हमे हज नही करने देगें तो हम आपकी व्यावसायिक सड़क जिससे आप सीरिया जाते है बंद कर देंगें।

नोट : यहां फिर दो व्यक्तियों के बीच मामूली विवाद को मोहम्मद साहब द्वारा लगातार छापे मारने का औचित्य सिद्ध करने के लिये उपयोग किया गया है। मोहम्मद साहब मूर्ति पूजा का धनघोर खंडन कर रहे थे। काबा उस समय मूर्ति मंदिर था और मूर्ति पूजक उसके रक्षक थे इस प्रकार अबू जहल का किसी मुसलमान के काबा में प्रवेश पर आपत्ति करना स्वाभाविक था। अल्लाह ने काफिरों को मस्जिद में जाने की इजाजत नहीं दी है। फिर किसी मूर्ति मंदिर में मूर्ति पूजक यदि किसी मुसलमान के जाने पर आपत्ति करते है तो इस कारण समस्त मक्का निवासियों के व्यवसायिक मार्ग को बन्द करने का औचित्य स्वीकार करना कठिन है।

4. यह कि काबा के रखवाले होने की हैसियत से मक्का के कुरैश दूर दूर तक रहने वाले कबीलों पर महत्वपूर्ण प्रभुत्व रखते थे। मोहम्मद साहब के मदीना चले जाने से खिन्न होकर उन्होंने इन तमाम कबीलों को मुसलमानों के विरुद्ध भड़काना प्रारम्भ कर दिया था।

नोट : नुमानी साहब ने अपने इस बयान की प्रमाणिकता में किसी संदर्भ का उल्लेख नहीं किया है। सर विलियमोहम्मद साहब म्यौर के अनुसार इस बयान के विरीत मोहम्मद साहब मदीना के प्रारम्भिक काल में इन कबीलों से मक्का निवासियों और मुसलमानों में युद्ध होने की दशा में मुसलमानों के विरुद्ध मक्का निवासियों का साथ न देने अथवा तटस्थ रहने की संधि करने के लिए बार बार दौरे करते पाये जाते है।

5. मोहम्मद साहब को न केवल अपनी और अपने उन साथियों की रक्षा करने की चिन्ता थी जो उनके साथ अपना घर बार छोड़कर मदीना गये थे अपितु उन अन्सारों की भी चिन्ता थी जिन्होंने इन लोगों को मदीनें में शरण दी थी।

नोट : जैसा कि ऊपर कहा गया है कि ऐसा कोई प्रमाण नही मिलता है कि यदि मोहम्मद साहब ने मकका निवासियों के विरुद्ध आक्रामक रुख न अपनाया होता तो वह लोग मुसलमानों से अथवा उनको शरण देने वाले मक्का निवासियों से हिंसात्मक युद्ध की घोषणा करते।

जो भी हो नुमानी साहब के उपरोक्त कथन से हमारे इस तक्र पर कोई विपरीत प्रभावनही पड़ता कि जब तक मोहम्मद साहब मक्का में रहे उनकी स्थिति ऐसी नहीं थी कि वह अपने विरोधियों के प्रति आक्रामक रुख अपना सकते। इसलिए मक्का काल में उतरी हुई आयते अपने मित्रों और परिवारवालों के बीच ही प्रचार सीमित करने पर बल देती है। विरोधियों के उपास्य देवी देवताओं और मूर्तियां का गाली देने से रोकती है। बार बार इस बात पर बल देती है कि पैगम्बर का कार्य केवल सत्य मार्ग मूर्ति और बहुदेवता पूजा की निरर्थकता दिखा देना है। लोग उसे माने या न माने इससे पैगम्बर को कोई वास्ता नहीं। उसे विरोधियों पर हवलदार बनाकर नहीं भेजा गया है। इसलिए कह दो हे पैगम्बर तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन और मेरे लिए मेरा दीन दीन में जोर जबरदस्ती नही। मै उनकी पूजा नहीं करता जिनकी पूजा तुम करते हो। तुम उसकी पूजा नहीं करते जिसकी पूजा मै करता हूं इत्यादि।

मक्का में मोहम्मद साहब के अनुयाइयों की संख्या इस समय तक कदाचित 100-150 से अधिक नहीं होगी। जैसा कि हम दिखा आये है मदीना जाने से पहले 3 वर्ष में गुप्त प्रचार और दूसरे तमाम उपायों द्वारा एक भी नया मुसलमान नहीं बना था। मदीना में पहुंचने के तुरन्त बाद ही उनके अनुयाइयों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई। खजराज और आस जैसे बलवान कबीलों ने उनकी रक्षा सौगंध ली हुई थी। इसलिए मक्का की स्थिति के विपरीत उनके और उनके अनुयाइयों को किसी प्रकार की शारीरिक हानि की सभावना नही रही थी। फलस्वरुप मदीना में उनके तेवर रक्षात्मक नहीं रहे थे अपितु आक्रामक हो गये थे। न केवल विरोधियों से युद्ध करने की आज्ञा मिल गयी थी अपितु पवित्र महीनों में भी छापें मारने और लूट मारने और लूटमार करने को भी उचित करार दें दिया गया था। युद्ध में अल्लाह सहस्त्रों फरिश्तों की सेंना भेजकर मुसलमानों को सहायता देने का बार बार वचन दे रहा था।

अतुल धनराशि का व्यावसायिक सामान लाने ले जाने वाले कारवाओं पर छापों से धन प्राप्ति की आशा में बहुत से लोगों ने इस्लाम स्वीकार किया होगा। इसका एक उदाहरण सर विलियमोहम्मद साहब म्यौर अपनी पूर्व कथित पुस्तक में इस प्रकार देते है। बदर के युद्ध में जो करवां सीरिया से मक्का लौटरहा था उसमें लगभग 50000 स्वर्ण सिक्कों का माल लदा हुआ था। जब इस कारवां पर छापा मारने वालों में शामिल थे। मोहम्मद साहब ने उनको अपने पास बुेलाया और उनसे पूछा कि वह वहां किसलिए आये है। उन्होंने उत्तर दिया तुम हमारें नातेदार हों हमारे शहर ने तुम्हें सुरक्षा दी है। और हम अपने लोगों के साथ तुम्हारी लूट मार में

सम्मिलित होने जा रहे है। मोहम्मद साहब ने कहा मेरे साथ सिवाय मुसलमानों के और कोई नहीं जायेंगा। इन लोगो ने बहुत बखान किया और प्रतिज्ञा की कि वह उनकी ओोर से मन लगाकर लड़ेगें और लूट के सामान में अपने हिस्से के अतिरिक्त और कुछ नहीं मागेंगें। किन्तु मोहम्मद साहब अपनी आत पर अड़े रहे तुम हर्गिज नहीं जाओंगें। पहले इस्लाम ग्रहण करों दूसरा कोई विकल्प न देखकर लूट के लोभ में उन्होंने इस्लाम ग्रहण कर लिया मोहम्मद साहब को पैगम्बर मान लिया और मुसिलम सेना में शामिल हो गये। इन लोगों ने बदर और दूसरे छापों में खूब लूटमार की। जब मोहम्मद साहब मदीना लौटे तो एक दूसरे नागरिक ने कहा काश मै भी पैगम्बर के साथ गया होता मुझक भी बहुत लूट का माल मिला होता निश्चय ही ऐसे दूसरे बहुत से लोग रहे होंगें जो लूट के लोभ मुसलमान हो गये होंगें। म्यौर पृ0

4

बहुधा मुस्लिम विद्वानों द्वारा इस बात पर बहुत अल दिया जाता है कि इस्लाम युद्ध और लूट की अनुमति नहीं देता। वह केवल सुरक्षात्मक युद्ध की ही अनुमति देता है। किन्तु यह बात तक्रसंगत नहीं लगती। सही मुस्लिम के अनुसार अबू हुर्रेरा से हदीस है कि उसने अल्लाह के पैगम्बर को यह कहते हुए सुना था मुझे लोगों से उस समय तक युद्ध करने का आदेश हुआ है जब तक कि वह यह सत्यापित न करें कि अल्लाह के अतिरिक्त दूसरा उपास्य नहीं है और यह विश्वास न करें कि मै अल्लाह के अतिरिक्त दूसरा उपास्य नहीं है और यह विश्वास न करें कि मै अल्लाह का रसूल संदेशवाहक हूं और उस सब में भी विश्वास न करें जो मेरे द्वारा लाया गया है। हदीस नं0 31)

जाबिर बिन अब्दुल्लाह अल अन्सारी से हदीस है कि पैगम्बर ने कहा : मुझे अल्लाह से पांच बाते प्रदान की गयी है जो मुझसे पहले किसी दूसरे पैगम्बर को नहीं प्रदान की गयी थी।

1. प्रत्येक रसूल अपने ही लोगों के बीच भेजा गया था मै पूरी मानवता के लिए भेजा गया हूं।
2. युद्ध में लूट का माल मुझे हलाल कर दिया गया है। जो मुझसे पहले किसी को नही किया गया था।
3. पूरा विश्व मेरे लिए मस्जिद बना दिया है इसलिए आप लोगों में से कोई जहां कहीं भी हो वहां बैठकर नमाज पढ़ सकता है।
4. मुझे ऐसा आतंक बख्शा गयी है कि मै अल्लाह से किसी मुसलमान द्वारा किये गये पाप को क्षमा करने की सिफारिश कर सकूं।
5. मुझे यह नियामत बख्शी गयी है कि मै अल्लाह से किसी मुसलमान द्वारा किये गये पाप को क्षमा करने की सिफारिश कर सकूं।

उपरोक्त हदीसों और आयतों को देखते हुए ऐसा नहीं लगता कि इस्लाम गैर इस्लाम को मिटाने के लिए आक्रामक युद्ध अथवा लूट की अनुमति नहीं देता।

इस्लाम की एक मुख्य मान्यता के अनुसार सचमुच ही इस प्रकार के सभी युद्ध मुसलमानों की दृष्टि में सुरक्षात्मक ही समझना उचित है। मोहम्मद साहब ने कहा था सारी पृथ्वी अल्लाह और उसके रसूल की है। हदीस मुस्लिम 4363 कुरान भी कहती है कि धरती के उत्तराधिकारी मेरे नेकदास होंगे। कुरान 21 :105 मुसलमानों का आग्रह है कि जो धरती हमारे रसूल की है वह हमारी है। इस तक्र की व्याख्या करते हुए इस्लाम के चौदहवीं शताब्दी के मूर्धन्य धर्माचार्य इब्न तमैया मुसलमानी और गैर मुसलमानों में निरन्तर युद्ध को यह कहकर न्यायोचित सिद्ध करते है कि गैर मुसलमानों के पास पृथ्वी के भू भागों का होना गैर कानूनी है। और देवी कानून शरियत के अनुसार वह मुसलमानों को वापिस हो जाने चाहिए। बाट यौर जिम्मी पृ0 45)

मिस्त्र निवासी विख्यात शहीद धर्माचार्य सैयद कुत्व बात को दूसरी प्रकार से कहते है : इस्लाम की धोषणा का अर्थ है गैर कानूनी ढंग से हथियाये गये अल्लाह के राज्य को वापिस लेना। जांन. एल. एस्पासिटों रिसर्जेट पृ0 81)

कुरान की अनेक आयतो मुसलमानों को इस युद्ध में भाग लेने को उत्साहित करती है :

निकल पड़ों चाहे हथियार हल्के हों या बोझल और अपने मालों और अपनी जानों के साथ अल्लाह के मार्ग में जिहाद करो। यह तुम्हारे लिए अच्छा है यदि तुम जानों।

उससे जी चुराने वालों की भर्त्सना करती है :

तुमसे युद्ध में न जाने की इजाजत केवल वहीं लोग चाहते है जो अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान नहीं रखते और जिनके दिल संदेह में पड़े है तो वे अपने संदेह में पड़े संकोच में है।

और यदि वे निकलने का इरादा करते तो उसके लिए कुछ तैयारी करते ....।

और डराती है :

यदि तुम न निकलोगे तो अल्लाह तुम्हें दुख देने वाली यातना देगा और तुम्हारे सिवा किसी और गरोह को लायेगा................।

और इनमें से कोई ऐसा है जो कहता है मुझे घर में पड़े रहने की इजाजत दे दो...................और निस्सदेह जहन्नम इन काफिरों को घेरे हुए है।

युद्ध में भाग लेने वालों को अनेक प्रकार के प्रलोभन देती है :

जो लोग सांसारिक जीवन के बदले आखिरत का सौदा करे उन्हें चाहिए कि अल्लाह के मार्ग में युद्ध करें। जो अल्लाह के मार्ग में युद्ध करेगा तो चाहे वह मारा जाय या विजयी हो उसे जल्द हम बड़ा प्रतिदान करेंगे।

हे ईमान लाने वालों क्या मै तुम्हें एक ऐसा व्यापार बताऊं जो तुमकों एक दुखभरी यातना से बचा लें।

ईमान रखों अल्लाह और उसके रसूल पर और जिहाद करो अल्लाह के मार्ग में अपने मालों और अपनी जानों से। यह तुम्हारे लिए उत्तम है यदि तुम ज्ञान रखते हों।

वह तुम्हारे गुनाहों को क्षमा कर देगा और तुम्हें ऐसे बागों में दाखिल करेगा जिनके नीचे नहरे बह रही है और अच्छे अच्छे घरों में जो सदा रहने के बागों में होंगे। यह है बड़ी सफलता।

एक दूसरी चीज भी जिसकी तुम चाहत करते हों सहायता अल्लाह की ओर से और विजय जो दूर नहीं।

युद्ध में मृत्यु हो जाने के भय को अवास्तविक बताती है। मृत्योपरान्त जन्नत के सुखभोग की ओर आकर्षित करती है :

और जो लोग अल्लाह के मार्ग में मारे गये उन्हें मरा हुआ न समझों। बल्कि वे अपने रब के पास जीवित है रोजी पा रहे है।

जो कुछ अल्लाह ने अपने फजल से उन्हें दिया है उस पर खुशियां मनाते है और उन लोगों के बारे में भी सूचना प्राप्त कर रहे है जो उनके पीछे रह गये है। अभी उनसे मिले नहीं है कि उन्हें न कोई भय होगा और न वे दुःखी होंगें।

और उन लोगों को जो अल्लाह के मार्ग में मारे जाते है मुर्दा न कहो वे तो जीवित है परन्तु तुम्हें इ सकी अनुभूति नहीं होती।

आज विज्ञान के युग में पश्चिमी शिक्षा प्राप्त लोगों पर इन बातों पर कदाचित कोई प्रभाव पड़ता नहीं दिखाई देता परन्तु बचपन से ही इस्लामी संस्कृति में पले ढले और रचे मदरसों कमतवों में शिक्षा प्राप्त व्यक्ति जिन्होंने इस प्रकार की आयतों को अल्लाह की वाणी न केवल मन और मस्तिष्क से स्वीकार न करना सीखा है अपितु वह उनके व्यक्तित्व का एक अभिन्न अंग बन गई है इस प्रकार के जिहादी युद्धों में अपने प्राणों परिवारों और सम्पत्तिको होम देने में तनिक भी संशय नहीं दिखाता। इनके चमत्कारिक मनोवैज्ञानिक प्रभाव का सचित्र वर्णन करने के लिए इतिहास के केवल दो उदाहरण प्रासंगिक होंगें :

1. सोलह वर्षीय अरब युवक उमैर पैगम्बर के शब्दों को सुनकर इतना उत्साहित हो गया कि अपने हाथ में बचे शेष खजूरों को फेंक कर बोला : अरे क्या इनकों खाने के लोभ से मै जन्नत से वंचित हुआ जा रहा हूं जब तक मै अल्लाह से भेंट नहीं कर लेता मै इन्हें चखूंगा भी नहीं। वह तुरन्त युद्ध में कूद पड़ा और मनोवांछित शहादत को प्राप्त हो गया। म्यौर पूर्वोद्धृत पृ0 226)

2. 1835 ई0 में जिला मैजिस्ट्रेट कोनौली की हत्या के फलस्वरुप ब्रिटिश भारत की सेनाओं ने दोषी मोपलाओं को आतंकित करने के लिये वहां गोरखों की एक टुकड़ी तैनात कर दी थी। विद्रोही हताश हो गये थे। तब चेम्बल शेरी नामक स्थान पर मस्जिद में एक मौलवी थंगल आकाश की ओर देख देखकर हंस रहा था। उधर से आते जाते कुछ लोगों ने पूछा मौलवी साहब आप हंस क्यों रहे है ? मौलवी ने कोई उत्तर नहीं दिया और उसी प्रकार आकाश की ओर देख देख कर हंसता रहा। धीरे धीरे वहां भीड़ एकत्रित हो गई और अनेक लोग वही प्रश्न मौलवी से पूछते रहे। तब मौलवी ने उत्तर दियाः 'तुम नहीं देखते जो मै देख रहा हूं,। एकत्रित लोगों ने पूछाः 'मौलाना हमें भी तो कुछ बताइये,? मौलवी ने उत्तर दिया : 'मैं देख रहा हूँ कि जन्नत की खिड़कियां खुल गई है। पिछले दिनों युद्ध में मारे गये शहीदों को जन्नत की

हूरें पकड़ पकड़ कर अन्दर ले जा रही है। भीड़ ने पूछा मौलाना हमें भी बताइयें कि हम जन्नत में दाखिल होने के लिए क्या करें? मौलवी ने कहा देखते क्या हो यह सामने जो गोरखों की टुकड़ी पड़ी है उन पर टूट पड़ों उन्होंनें ऐसा ही किया और 500 मोपला मारे गये। सत्यकेतु विद्यालंकार आर्य समाज का इतिहास खण्ड 2 पृ0 487)

ऐसा लगता है कि बार बार कारवाओं के बचकर निकल जाने से मोहम्मद साहब को संदेह हो गया था कि उनके आक्रमण की सूचना और स्थान का पता विरोधियों को पहले ही लग जाता है। अगली बार उन्होंने अपने लोगों को छापे के स्थान और समय की सूचना नहीं दी। छापा दल के नेता को एक मोहरबन्द पत्र दिया गया। उससे कहा गया कि जब वह मदीने से काफी दूर एक विशिष्ट स्थान नखला पर पहुंच जाय तब उस पत्र को खोलकर पढ़े और उसी के अनुसार कार्य करे।

यह कारवां पवित्र महीनों में सफर करने के कारण जिनमें छापे और युद्ध पुरानी परम्परा के अनुसार निषिद्ध थे केवल 4 रक्षकों के साथ सफर कर रहा था। मोहम्मद साहब के केवल 6 छापा मारों के भेजने से ऐसा लगता है कि उन्हें कारवां के मार्ग और उसके साथ चल रहे केवल 4 रक्षकों की संख्या की सूचना पहले से ही प्राप्त हो गई थी।

छापामारों में से एक व्यक्ति ने अपना सिर मुड़ा लिया था जिसके कारण कारवां के रक्षकों को निश्चय हो गया कि यह लोग हज यात्री है क्योंकि यह हज का समय था। छापा सफल रहा और रक्षकों में एक व्यक्ति मारा गया एक भाग गया दो बन्दी बना लिये गये ओर तमाम कारवां के साथ मदीनें ले जाये गये।

नोट – इस घटना के पश्चात शताब्दियों पुरानी अरब परम्परा जिसके अनुसार पवित्र महीनों में युद्ध और छापे वर्जित थे अल्लाह द्वारा समाप्त कर दी गयी और युद्ध मुसलमानों पर फर्ज कर दिया गया।

तुम पर युद्ध फर्ज किया गया और वह तुम्हें अप्रिय है और हो सकता है एक चीज तुम्हें बुरी लगे और वह तुम्हारें लिए अच्छी हों और हो सकता है कि एक चीज तुम्हें प्रिय हो और वह तुम्हारें लिए बुरी हो। अल्लाह जानता है तुम नहीं जानते।

वे तुमसें पवित्र महीनों में युद्ध के बारे में पूछते है कह दो उसमें युद्ध बहुत बुरा है परन्तु अल्लाह के मार्ग से रोकना उसका कुफ्र करना काबा से रोकना और उसके लोगों को उससे निकालना अल्लाह की दृष्टि में इससे भी बढ़कर बुरा है और मूर्ति पूजा रक्त पात से भी बढ़कर है।

8. जनवरी 624 ई0(हि0 2) **बदर का युद्ध**	950 (700 ऊंट और 100 घुड़सवार शामिल है।)	315

युद्ध में मुसलमानों की पूर्ण विजय हुई विरोधियें में से 49 व्यकित जिनमें उनके महत्वपूर्ण 15 योद्धा भी थे मारे गये और लगभग 45 ही मुसलमानों द्वारा बन्दी बना लिये गये। मुसलमानों में से कुल 14 व्यक्ति मारे गये जिनमें से 8 मदीना निवासी थे और 6 मक्का से आये शरणार्थी थे।

एस. ए. एच. रिजवी अपनी पुस्तक बैटिल्य बाई द प्राफेट में लिखते है : 70 युद्ध बंदियों के विषय में हजरत उमर जो बाद में दूसरे खलीफा बने की राय थी कि उन सब की गर्दने उनके नजदीकी रिश्तेदार मुसलमानों द्वारा कटवा दी जांय। मोहम्मद साहब ने इसे अस्वीकार कर दिया। उन्होंने फिरौती लेकर उन सबकों रिहा करने के आदेश दिये। जो इतने दरिद्र थे कि फिरौती नहीं दे सकते थे उनकों बिना फिरौती भी रिहा न करने के आदेश दिये। जो पढ़े लिखे थे उनसे फिरौती के स्थान पर यह सेवा ली गयी कि वह मदीन निवासियों के बच्चों को लिखना पढ़ना सिखा दें। जिन लोगों को अरबी के अतिरिक्त दूसरी भाषायें भी लिखनी पढ़नी आती थी उनकों कहा गया कि वह बच्चों को वह भाषायें भी लिखनी पढ़नी सिखा दें।

इस एक बात से यह लगता है कि मोहम्मद साहब लिखने पढ़ने को और विशेष रुप से विदेशी भाषाओं का ज्ञान अर्जन करने को कितना महत्व देते थे। इसका फल यह निकला कि शीघ्र ही मदीना निवासियें में विद्वानों की एक श्रंखला स्थापित हो गई। मुस्लिम समाज ने इस आदर्श को सामने रखते हुए अपने बच्चों को धार्मिक शिक्षा के लिए भारत में आजादी के बाद लगभग 100000 नयें मदरसे और लाखों मकतब स्थापित किये है। वह भी बिना शासन से एक पैसा अनुदान लिये। यह मदरसे प्रतिवर्ष लगभग 5 लाख कुरान और हदीसों के विशेषज्ञ धर्मनिष्ठ तालिबान तैयार करते है। उनका एक मात्र ध्येय होता है सम्पूर्ण गैर मुस्लिम भारत को मुसलमान बनाकर वहां शरियत कानून लागू करना।

म्यौर साहब इस अवसर पर कुछ अप्रिय घटनाओं का भी उल्लेख करते है। बन्दी अब्दुल जहल मोहम्मद साहब का मुख्य प्रतिद्वन्द्वी था। उसने उनको पैगम्बर स्वीकार करने से सदैव इन्कार किया। उनको भला बुरा कहता रहता था। युद्ध बन्दियों में जिस समय उसको पकड़ा गया वह गम्भीर रुप से जख्मी था। एक मुसलमान अब्दुल्लाह ने उसे देखा तो

वह दौड़कर गया और उसका सिर काटकर मोहम्मद साहब के समक्ष पेश कर दिया। मोहम्मद साहब ने प्रसन्न होकर कहा : अल्लाह के अतिरिक्त दूसरा कोई उपास्य नहीं। मेरे लिये यह भेंट अरब देश के सर्वश्रेष्ठ ऊंट से भी अधिक प्रिय है।

बंदियों में एक मक्का निवासी अबुल बख्तियारी भी था। यद्यपि मुसलमान नहीं बना था फिर भी इस व्यक्ति ने मक्का में मोहम्मद साहब की सहायता की थी और उनसे प्रेम करता था जबकि दूसरे मक्का निवासी उनका घोर विरोध कर रहे थे। मोहम्मद साहब का हुक्म था कि उसे कोई हानि न पहुंचने पाये। जब वह ऊंट पर बन्दी बनाकर लाया जा रहा था तो उसके पीछे एक अन्य मक्का निवासी बन्दी भी बैठा था। एक मुसलमान योद्धा ने जब यह देखा तो कहा तुम तो सही सलामत जा सकते हो परन्तु तुम्हारे पीछे बैठा बन्दी तो कत्ल किया जायेगा। बख्तियारी ने कहा : मै नहीं चाहूंगा। कि मक्का की स्त्रियां यह कहकर मेरा उपहास करें कि मैने अपने साथी का साथ छोड़ दिया। दोनों काट डालें गये।

मोहम्मद साहब के विशेष कृपापात्र अब्दुल रहमान से सहायता मांगी। अब्दुल रहमान ने पिछली मित्रता के नाते लूट का सामान जो वह ला रहा था फेंक दिया और उसके स्थान पर उमैया को ऊंट पर बिठा लिया। परन्तु अपने कैम्प में प्रवेश करते हुए उसे बिलाल ने देख लिया जो उमैया को अपना घोर प्रतिद्वन्द्वी मानता था। बिलाल ने तुरन्त उसका सिर काट दिया। दो और बन्दी भी स्वयं मोहम्मद साहब के आदेश से काट डाले गये। किन्तु कदाचित युद्ध में फिरौती के लिए बन्दी बनाना अल्लाह को रास नहीं आया। कारण भी स्पष्ट था। मुख्या ध्येय था अल्लाह के अतिरिक्त दूसरे उपास्यों के उपासकों को मुसलमान बनाना अथवा यदि वे इस्लाम स्वीकार न करें तो उनको नष्ट कर देना जिससे कि केवल अल्लाह का मत इस्लाम ही जीवित रहे। काफिरों को बन्दी बनाकर और फिर फिरौती लेकर छोड़ देने से इस ध्येय की पूर्ति में व्यवधान पड़ता था। इसलिए पहले इतना रक्तपात करना आवश्यक था कि युद्ध बन्दी आतंकित होकर प्राण बचाने के लिए तुरन्त इस्लाम स्वीकार कर लें। इसलिए आयत उतरी :

किसी नबी को छूट नहीं है कि वह युद्ध मे लोगों को बन्दी बनाये जब तक कि वह धरती में कत्ले आम न कर दें। तुम लोग दुनिया की सुख सामग्री लूट का माल चाहते हो और अल्लाह आखिरत चाहता है और अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।

यदि इसके बारे में अल्लाह पहले से न लिख चुका होता तो जो कुछ तुमने किया है उस पर तुम्हें कोई बड़ी यातना पहुंचाता।

तो जो कुछ लूट तुमने हासिल की है उसे हलाल और पाक समझ कर उसका आनन्द उठाओं और अल्लाह से डरते रहो। निस्संदेह अल्लाह बड़ा क्षमाशीन और दया करने वाला है।

अल्लाह के इन आदेशों के पालन का वांछित फल निकला। जहां मक्का काल में 12वर्षो के कठिन परिश्रम से केवल 100-150 लोग वह भी मोहम्मद साहब के नातेदार मित्र और स्वतंत्र किये गये। गुलाम मुसलमान बन पाये थे मदीना पहुंचने के केवल 8 वर्ष बाद मोहम्मद साहब के मक्का आक्रमण के समय उनके साथ 10000 अनुशासित सुसज्जित और अनेक घुड़सवार और ऊंट सवार सैनिक थे। इतने सैनिकों का अर्थ था कि मुसलमानों की संख्या युद्ध में न जाने वाले पुरुषों स्त्रियों और बच्चों को मिलाकर 25-30 हजार के लगभग रही होगी।

युद्ध बन्दियों में मोहम्मद साहब के चाचा अल अब्बास भी थे। वह भी दूसरे बन्दियों की भांति रात भर खूटें से बंधे पड़े रहे। रात को उनकी दर्द भरी कराहट को सुनकर मोहम्मद साहब ने उनकी तथा दूसरे बन्दियों की रस्सियां ढीली करने के आदेश दिये। इस युद्ध में पुत्र पिता के विरुद्ध चाचा भतीजे के विरुद्ध लड़ा था। और एक दूसरे का वध करने में कोई दया अथवा भ्रातृत्व का परिचय नहीं दिखाया गया था। इस्लाम ने पुराने खून के रिश्तों को तोड़कर मजहब पर आधारित नये रिश्ते कायम कर दिये थे।

सैयद कुत्व ठीक फरमाते है : मुसलमान के नातेदार उसके माता पिता भाई बन्धु और जाति के लोग नहीं है। उसका नाता केवल इस्लाम द्वारा दूसरे मुसलमानों से रह जाते है। (जे0 एल0 एस्पासिटों : वायसेज आंफ रिसर्जेन्ट इस्लाम पृ0 79)

9. जैद द्वारा अलकरदा स्थान पर मक्का के कारवां की लूट सित0 624 ई0 हिजरी 2	चांदी से लदा व्यवसायी कारवां जो मुस्लिम छापामारों से बचने के लिए लालसागर तट वाला सीधा रास्ता छोड़कर कठिन मार्ग से जा रहा था।	जैद के नेतृत्व में 100 योद्धा

मदीने में अब हालात ऐसे हो गये थे कि मोहम्मद साहब और इस्लाम के विरुद्ध एक शब्द बोलना भी खतरनाक हो गया था। उनके विरुद्ध किसी प्रकार की भी विपरीत टिप्पणी का अर्थ था उनके किसी भी अनुयायी के हाथों देर सबेर वध कर दिया जाना। मक्का से सीरिया जाने का कोई भी मार्ग अब सुरक्षित नहीं रह गया था।

मुसलमानों की इस युद्ध में पराजय हुई। मोहम्मद साहब ने कुछ धनुषधारी सैनिकों को किसी भी दशा में एक विशेष स्थान को न छोड़ने का आदेश दिया था। भागती हुई मक्का सेना का सामान लूटने के लोभ में यह सैनिक अपने कर्तव्य को भुलाकर लूट के लिए भाग पड़े जिससे मक्का सेना के नेता खालिद को मोहम्मद साहब की सेना पर पीछे से आक्रमण करने का सुअवसर प्राप्त हो गया।

इस पराजय से मोहम्मद साहब की प्रतिष्ठा को कुछ धक्का अवश्य लगा। परन्तु उनके योद्धाओं को इस बात का पूर्ण अहसास था कि पराजय का एक मात्र कारण यह था कि उनके कुछ योद्धाओं ने मोहम्मद साहब के आदेशों की अवहेलना की थी। इसलिए उनके अनुयाइयों में उनके प्रति श्रद्धा और आदर में कोई कमी नहीं आई।

मदीने के आसपास की यहूदी बस्तियां और कुछ दूसरे कबीले अभी भी अनेक कारणों से मोहम्मद साहब का विरोध कर रहे थे। उनके विरुद्ध गुप्त राजनीतिक साजिशें भी चल रही थी। मोहम्मद साहब ने निश्चय किया कि उनको वहां से निकाल भगाया जाय अथवा कत्ल कर दिया जाय। उन्हें विश्वास था कि यह विरोधी अपने आतंरिक विरोधों केकारण संगठित होकर उनका सामना नहींकर सकेंगे। उनकी शक्ति अब इतनी बढ़ गई थी कि उन्होंने सफलता पूर्वक एक एक यहूदी दल को उनके देश से भाग जाने पर मजबूर कर दिया। कुरान की निम्नलिखित आयतें इस स्थिति का संकेत देती है।

और याद करों तुम सबेरे अपने घर से निकले ईमान वालों को उहुद के मैदान में युद्ध के लिए मोर्चो पर नियुक्त करने के लिए और अल्लाह सुनता और जानता है।

याद करो जब तुम में से दो दलों ने साहस छोड़ देना चाहा जबकि अल्लाह उनका संरक्षक मित्र था। और ईमान वालों को अल्लाह पर भरोसा रखना चाहिए।

और बद्र की लड़ाई में अल्लाह तुम्हारी मदद कर भी चुका था जब कि तुम बहुत कमजोर थे। तो अल्लाह का डर रक्खों ताकि तुम कृतज्ञता दिखा सको।

याद करो जब तुम ईमान लाने वालों से कह रहे थे कि क्या तुम्हारे लिए यह काफी नहीं है। कि तुम्हारा रब 3000 फरिश्ते उतारकर तुम्हारी सहायता करेगा।

और अल्लाह और रसूल का कहना मानों ताकि तुम पर दया की जाये।

अल्लाह द्वारा उपरोक्त आयतों के अवतरण से और मोहम्मद साहब द्वारा यहूदियों की साजिशों को निष्फल कर देने से मोहम्मद साहब की प्रतिष्ठा पर उहुद के युद्ध की असफलता से जो थोड़ा बहुत विपरीत प्रभाव पड़ा था वह मिट गया।

11.	बदर का युद्ध फरवरी मार्च 625 ई0 (हि0 4)	2000 पैदल, 50घुड़सवार	1500 सैनिक

आठ दिन बाद में पड़ाव डाले रहने के पश्चात् मुस्लिम सेना मदीना वापिस लौट आई। मक्का की सेना की हिम्मत ही नहीं पडी़ कि वे युद्ध के लिए बदर पहुँचती।

12.	मदीने पर मक्का निवासियों द्वारा यहूदियों और शत्रु अरब कबीलों का संगठित आक्रमण। **खंदक का युद्ध** फरवरी-मार्च 627ई0 (हिजरी 5)	2200पैदल, 1500घुड़सवार 300 ऊँट सवार, 400 कबीला सैनिक असजा के नेतृत्व में 400 कबीला सैनिक मुर्रा के नेतृत्व में 1000 ऊँट सवार और 700 सैनिक ओझा और सुलेमान के नेतृत्व में। कुल सेना लगभग 10000,	लगभग 2000साथियों के साथ मोहम्मद साहब ने मदीने में रहकर ही मक्का की सेना द्वारा घेरा बन्दी का सामना किया।

सलमान पारसी की सलाह पर मदीने के खुले भाग में पहाड़ियों के बीच बीच में जहां पहाड़ियां नही थीं 30 फुट चौड़ी और 15 फुट गहरी 400 गज लम्बी खन्दक मोहम्मद साहब और उनके 2000 साथियों द्वारा 20 दिन में खोद डाली गयी। इस कार्य के लिए उन्होंने 10-10 मुसलमानों की 200 पार्टियां बनायी। प्रत्येक पार्टी को 20-20 गज की लम्बाई में खन्दक खोदने को कहा गया। यह पूरा कार्य कर सेवा द्वारा 20 दिन में पूर्ण कर लिया गया। स्वयं मोहम्मद साहब ने इसमें भाग लिया जिससे मुसलमानों का उत्साह दिन प्रतिदिन बढ़ता रहा।

मक्का की सेना 25 दिन घेरा डाले पड़ी रही। इस बीच दोनों ओर कूट चालें चलती रहीं। अन्त में मक्का की सेना राशन कम पड़ने और अपनी कूटनीति सफल न होने के कारण वापिस चली गयी।

कुरैश सेना के लौट जाने के तुरन्त बाद मोहम्मद साहब ने यहूदियों की बस्ती बनी कुरैजा को जा घेरा। यह यहूदी मदीने के ही निवासी थे और खन्दक की घेराबन्दी में इन पर मक्का की सेना के साथ दुरभि सन्धि करने का आरोप था। सभी स्त्री पुरुष बच्चों को बन्दी बना लिया गया। बनी कुरैजा और उनके आस कबीले के मित्रों ने अपने भाग्य का फैसला आस कबीले के मुसलमान साद पर छोड़ दिया। उन्हें आशा थी कि आस कबीले और बनी कुरैजा की पुरानी पारम्परिक मित्रता के कारण साद का फैसला उनके हित में होगा परन्तु इस्लाम ने काफिरों यहूदियों और इसाई मित्रों के साथ सभी पुराने नाते रिश्ते तोड़ दिये थे।

हे ईमान लाने वालों। अपने बापों और अपने भाइयों को अपना मित्र न बनाओं यदि वे ईमान की अपेक्षा कुफ्र को पसन्द करें। और तुम में से जो कोई उन से मित्रता का नाता जोंड़ेगा तो ऐसे ही लोग जालिम समझे जायेंगे।

हे ईमान लाने वालों। ईमान वालों के मुकाबले में काफिरो को मित्र न बनाओं। क्या तुम अपने ही विरुद्ध अल्लाह के लिए एक स्पष्ट तर्क संचित करना चाहते हों?

फलस्वरुप साद ने निर्णय दिया : सभी यहूदी पुरुष कत्ल कर दिये जांय। उनके स्त्री और बच्चे गुलाम बना लिये जांय और बनी कुरैजा की तमाम सम्पत्ति मकान बाग नगदी घरों का सामान आदि मुस्लिम सेना के बीच बांट दी जांय।

अगले दिन प्रातः लगभग 800 पुरुषों और एक स्त्री को जिसने स्वयं ही प्रार्थना की थी कि उसकों भी उसके पति के साथ कत्ल कर दिया जाय बाजार में पहले से खोदी गयी खन्दकों के किनारे पर बैठाकर वध कर दिया गया और उन्हीं खन्दकों में उनको दफन कर दिया गया।

बनी कुरैजा की जो स्त्रियां बन्दी बनायी गयी थी उनमें से एक सुन्दर यहूदी स्त्री रिहाना मोहम्मद साहब को पसन्द आ गयी थी। उन्होंने उससे विवाह का प्रस्ताव रखा किन्तु उसने इस्लाम स्वीकार करने से और उनसे विवाह करने से इन्कार कर दिया और गुलामी की प्रथा के अनुसार उनकी रखैल होकर रहना स्वीकार कर लिया। उसकी मृत्यु मोहम्मद साहब से 1 वर्ष पहले हो गयी थी।

कुरान इस घटना का विवरण इस प्रकार देती :

'और 'किताब वालों' (यहूदियों में स) जिन लोगों ने उन (आक्रमण करने वालों) का साथ दिया था अल्लाह उन्हें उनकी गाढ़ियों से उतार लाया और उनके दिलों में भय डाल दिया - एक गिरोह को (पुरुषों को) तुम कत्ल कर रहे हो और एक गिरोह को (स्त्रियां और बच्चों को) कैद कर रहे हों।

और उसने तुम्हें उनकी धरती और उन के घरों और उनकी सम्पत्ति का वारिस बना दिया और उस भूमि का भी जिस पर तुमने पैर भी रक्खा। अल्लाह को हर चीज का समर्थ्य प्राप्त है।

शत्रुओं के व्यावसायिक कारवाओं पर छापा मारने के अतिरिक्त अभी तक मोहम्मद साहब युद्ध के लिए चल कर विरोधियों पर आक्रमण करने नहीं निकले थे। परन्तु अब उनकी शक्ति इतनी बढ़ चुकी थी कि वह उनकी बस्तियों और गढ़ों पर आक्रमण कर सकते थे। वास्तव में खन्दक के युद्ध के पश्चात मोहम्मद साहब ने कहा था इस युद्ध के बाद आक्रामकता मक्का निवासियों के हाथ से फिसलकर भविष्य में सदैव मुसलमानों के हाथ में रहेगी।

खन्दक के युद्ध को समाप्त हुए लगभग 1 वर्ष हो चुका था। मदीने और उसके आस पास से गैर मुसलमानों और विशेषकर यहूदियों का सदैव के लिए सफाया हो चुका था। लाल सागर के तट से लगे मक्का से सीरिया जाने वालें मुख्य कारवां मार्ग पर बसने वाले कबीलों से मोहम्मद साहब अनाक्रामक सन्धि अथवा मक्का निवासियों को सहायता न देने का आश्वासन प्राप्त कर चुके थे। उनकी रसूलत के दावे को भी अब कोई विशेष खतरा नहीं रहा था।

ऐसे मे मोहम्मद साहब को अल्लाह से एक सपने द्वारा मक्का जाकर हज्ज करने की प्रेरणा मिली। इससे मोहम्मद साहब अपनी शक्ति का प्रदर्शन भी कर सकते थे। तीर्थ यात्रियों पर यदि मक्का निवासी आक्रमण करते तो सारे अरेबिया में उनका मुंह काला हो जाता और सहानुभूति मुसलमानों को प्राप्त होती। यदि मक्का निवासी आक्रमण करते तो सारे अरेबिया में उनका मुंह काला हो जाता और सहानूभूति मुसलमानों को प्राप्त होती। यदि आक्रमण न करते और मोहम्मद साहब परम्परानुसार हज करके लौट जाते तो मोहम्मद साहब का शक्ति प्रदर्शन और कुरैश के विरोध के बावजूद काबे पर उनका दावा सिद्ध हो जाता। दोनो प्रकार लाभ मोहम्मद साहब और इस्लाम को होना था।

सपने में मोहम्मद साहब ने देखा कि वे अपने अनुयाइयों के साथ काबे की परिक्रमा और वहां परम्परानुसार ऊंटों की बलि चढ़ाकर लौट रहे है। जब ये सपना मुसलमानों को सुनाया गया तो सभी मक्का जाकर हज करने को बैचेन हो उठे। शरणर्थियों को अपना घर बार छोड़ें छह वर्ष हो रहे थे और वे अपने प्रिय जन्म स्थान को देखने के लिए उतावले थे।

इस प्रकार 628 ई0 के फरवरी मार्च में हिजरी 6 में हज्ज की तैयारियां पूरी कर ली गयी। पवित्र महीनें प्रारम्भ होने जा रहे थे। यद्यपि पवित्र महीनों में भी मुसलमानों द्वारा गैर मुसलमानों पर छापा मारने उन्हें लूटनें और कत्ल करने की अल्लाह द्वारा अनुमति दी जा चुकी थी परन्तु मक्का निवासी कुरैश औश्र अरेबिया के दूसरे गैर मुस्लिम कबीलें अभी भी परम्परनुसार पवित्र महीनों में लड़ाई झगड़ा और रक्तपात को अत्यन्त अधार्मिक कार्य समझतें थे।

शीघ्र ही मदीनें के निवासी मुसलमान अन्सार और मक्का से गये हुए शरणार्थी हज के लिए तैयार हो गये। आस पास के दूसरे अरब कबीलों को भी जिनसे मोहम्मद साहब की सन्धियां हो चुकी थी हज्ज का निमंत्रण भेज दिया गया था। यात्रा शुरु होने से पहले मोहम्मद साहब ने अपने घर में स्नान किया यात्रियों की पोशक अर्थात दो बगैर सिलें कपड़े पहने और अपने ऊंट अल कवासा पर चढ़कर 1500 सह यात्रियों के साथ मक्का की ओर प्रस्थान किया। ये लोग रास्ते भर लब्बेक लब्बेक का नारा लगा रहे थे। इसका अर्थ है या अल्लाह मै आ रहा हूं। जुल हुलेफा नामक स्थान पर पहुंचकर बलि के ऊंटों को अलग कर दिया गया। उनके गलों में गहने पहना दिये गये और दाहिनी ओर निशान लगा दिये गये जिससे यह पता चलता था कि यह बलि के ऊंट है। इस प्रकार 70 ऊंटों को चिन्हित किया गया जिनमें एक ऊंट अबू जहल का भी था जो बदर के युद्ध में मुसलमानों के हाथ लगा था। फिर कारवां मक्का की ओर चल पड़ा। 20 घुड़सवार इसकी अगुवाई कर रहे थे। यात्रियों के पास एक तलवार मोहम्मद साहब मय म्यान के एक धनुष बाणों से भरे तरकश के अतिरिक्त दूसरा कोई हथियार नहीं था क्योंकि हज्ज यात्रियों के लिए यही नियम था। मोहम्मद साहब के साथ उनकी पत्नी उम सलमा भी थी।

इन यात्रियों के मक्का पहुंचने की सूचना मक्का निवासियों को मिली तो वहां तुरन्त लोग युद्ध के लिए तैयार होने लगे। 200 घुड़सवारों का एक दल खालिद और इकरीमा के नेतृत्व में मदीने से आने वाली सड़क पर चल पड़ा।

मोहम्मद साहब को जैसे ही इसकी सूचना मिली उन्होंने अपना मार्ग बदलकर एक दूसरे और लम्बे कठिन मार्ग से अल हुदैबइया नामक स्थान पर अपना कैम्प डाल दिया। यह एक खुला हुआ स्थान था और मक्का की पवित्र भूमि से लगा हुआ था।

मोहम्मद साहब ने ऐलान किया कि अल्लाह की कसम इस पवित्र स्थान काबा की पवित्रता को बनाये रखने के लिए आज मैं कुरैश की किसी भी प्रार्थना को अस्वीकार नहीं करुगां।

मोहम्मद साहब और उनके 1500 साथियों के मक्का के समीप पहुंचने की सूचना ने मक्का में खलबली मचा दी। बदर के युद्ध में अपनी लज्जाजनक पराजय वह भूले नहीं थे। वहां केवल 315 मुस्लिम योद्धाओं ने उनके 950 ऊंटसवारों को धूल चटा दी थी। अब 1500 मुसलमान मक्का की ओर बढ़े चले आ रहे थे। यह वह योद्धा थे जिनको न प्राणें का मोह था न अपने गैर मुस्लिम बेटों बीवीयों और मित्रों का। जो अपने नेता को अल्लाह का नबी और उसके आदेश को अल्लाह का आदेश होने पर पूर्ण विश्वास करते थे। जिनको अल्लाह की राह में शहीद होकर जन्नत के असंख्य भोग भोगने की बेकरारी थी। इसलिये मक्का में भय और आतंक का वातावरण था। मक्का की रक्षा के लिये शीघ्र ही तैयारी प्रारंभ हो गई। साथ ही साथ मोहम्मद साहब के पास एक शिष्ट मंडल भेजकर उनके वास्तविक इरादे की जांच परख करने का निश्चय हुआ। खोजा कबीले के नेता बुदेल को इस कार्य के लिये चुना गया। वह अपने कबीले के कुछ लोगों को लेकर मोहम्मद साहब के पास गया और उन्हें स्थिति से परिचित कराया। मोहम्मद साहब ने कहा मेरा इरादा केवल कावे की तीर्थ यात्रा करना है और यदि किसी ने हम लोगों को इस अधिकार से वंचित करने का प्रयास किया तो निश्चय ही युद्ध होगा। बली के लिये अरब परंपरा के अनुसार चिन्हित 70 ऊंट भी बंधे हुये बुदेल ने देखे।

बुदेल से समाचार मिलने पर मक्का में लोगों ने कुछ राहत की सांस ली। फिर भी एक और प्रतिनिधि मंडल भेजकर इसकी पुष्टि कराना बेहतर समझा गया। इस बार अल तैफ के एक मुखिया ओखा के अधीन जो अबू सुफियान का दामाद भी था दूसरा प्रतिनिधि मंडल भेजा गया। उसने कुछ शेखी बघारते हुये मोहम्मद साहब से कहा मक्का के लोग तुम्हारे साथ आये इन कुली कबाड़ियों को मक्का में सहन नहीं करेंगे। मुझे स्पष्ट नजर आ रहा है कि युद्ध होते ही यह तुम्हें अकेला छोड़कर भाग खड़े होंगे। इस व्यंग पर अबू बकर ने घोर आपत्ति की। इस पर ओखा और उत्तेजित हो उठा और उसने मोहम्मद साहब की दाढ़ी पर हाथ डालने का प्रयास किया । पास में खड़े एक मुस्लिम युवक ने तुरंत उसके हाथ पर चोट करते हुये कहा खबरदार अल्लाह के पैगम्बर से दूर रहना।

ओखा को यह अहसास हो गया कि मुसलमाना किस सीमा तक अपने पैगंबर के प्रति समर्पित है। उसने भी लौट कर मक्का निवासियों को मोहम्मद साहब की सैनिक शक्ति परन्तु उन के तीर्थ यात्रा के इरादे की सत्यता पर विश्वास करने को कहा।

मक्का निवासियों को मोहम्मद साहब के तीर्थ यात्रा के इरादे पर विश्वास हो चला था परन्तु अब उन्हें अपनी साख की चिन्ता ने आ घेरा। उन्होंने मोहम्मद साहब को कहलवाया कि इस बार हम तुम्हे इतने साथियों के साथ मक्का में प्रवेश नहीं करने देंगें। तमाम अरब निवासी इसकों हमारी कायरता कमझेगें। परन्तु अगले साल हज्ज के अवसर पर हज करने आओं तो हम तुम्हें मक्का में प्रवेश करने से नहीं रोंकेंगें। तुम सही सलामती से हज्ज कर सकोंगे। तब मोहम्मद साहब ने अपने दामाद हजरत उस्मान को बाद में तीसरे खलीफा बने मक्का निवासियों को आश्वस्त करने और लिखित संधि के लिये आमंत्रित करने के लिये भेजा।

हजरत उस्मान को मक्का से लौटनें में कुछ देर हो गई। मोहम्मद साहब के कैम्प में विश्वास घात की आशंका से फिर मक्का पर आक्रमण करने की तैयारियां होने लगी। इस अवसर पर मोहम्मद साहब ने एक बार फिर मुसलमानों से अपने नेतृत्व के प्रति परंपरानुसार सौगंध ली किवह सब लोग उस्मान का साथ मृत्यु र्प्यन्त देंगे। परन्तु हजरत उस्मान सुहैल के नेतृत्व में मक्का के प्रतिनिधि लौट आये। सुहेल को मक्का की ओर से संधि की शर्त निश्चित करने और उनकी ओर से संधि पत्र पर हस्ताक्षर करने का अधिकार दिया गया था। इस प्रकार जो संधि हुई वह हुदैवैय्या की संधि के नाम से विख्यात है। मदीना की संधि की भांति हुदैवैय्या की संधि भी इस्लाम के इतिहास में विशेष महत्व रखती है। भारत के वर्तमान परिपेक्ष में मौलाना वहीदुद्दीन खां मुसलमानों को इसी संधि के अनुसार आचरा करने की सलाह देते रहते है। इस विषय पर हम अलग एक अध्याय में कुछ विस्तार से विचार करेंगे। अली साहब इस संधि पत्र को कलम बंद कर रहे थे। संधि पत्र के प्रारम्भ में ही मक्का निवासियों की ओर से मोहम्मद साहब के नाम के आगे रसूल अल्लाह शब्द लिखने पर घोर आपत्ति की गई। उन्होनं कहा यही तो हमें मंजूर नहीं है। मुसलमानों को यह आपत्ति बहुत बुरी लगी। परन्तु मोहम्मद साहब ने अपने हाथ से इन शब्दों को संधि पत्र में काट दिया। संधि की शर्ते इस प्रकार थी।

1. अगले 10 वर्ष के लिये युद्ध प्रति बंधित रहेगा।
2. जो कोई भी मोहम्मद साहब के साथ जाना चाहे अथवा उनसे संधि करना चाहे वह ऐसा कर सकेगा। इसी प्रकार जो कोई भी कुरैश के साथ जाना चाहे अथवा उनसे संधि करना चाहे वह ऐसा कर सकेगा।
3. यदि कोई व्यक्ति अपने संरक्षक की अनुमति लिये बिना मोहम्मद साहब की ओर चला जाय तो उसे उसके संरक्षक के पास वापिस भेज दिया जायगा। परन्तु यदि कोई मोहम्मद साहब का अनुयाई कुरैश के पास लौटना चाहे तो उसे रोका नहीं जायगा।
4. इस वर्ष मोहम्मद साहब बगैर मक्का में प्रवेश किये अपने साथियों सहित वापिस जायेंगे। अगले वर्ष वह अपने साथियों के साथ तीन दिन के लिये मक्का में ठहर सकते है। उन तीन दिनों के लिये मक्का में आते समय अरब परंपरानुसार हज में सीमित हथियार रखने की अनुमति है।

इस संधि ने मुसलमानों को बहुत निराश किया। मुसलमानों के हौसले बुलंद थे। वे संख्या में 1500 थे। संगठित थे। जां बाज थे। अल्लाह के पैगम्बर उनके साथ थे। अल्लाह उनके साथ था। 3000-5000-10000 फरिश्तों की सेना युद्ध में दुश्मनों को आतंकित करने और उनकी ओर से लड़ने को सदैव तैयार रहती थी। ऐसी सुदृढ़ स्थिति के होते हुये भी उनके पैगम्बर ने इस प्रकार की उनकी दृष्टि में अपमान जनक शर्तो पर संधि कर ली। परंतु मोहम्मद साहब की दृष्टि मक्का पर सीमित नहीं थी। वह पूरे विश्व से मूर्ति और दूसरे सभी देवी देवताओं की पूजा तथा दूसरे भ्रष्ट रीति रिवाजों दर्शनों संस्कृतियों को समूल नष्ट कर ज्ञानमय इस्लाम धर्म इस्लामी राज्य व्यवस्था और इस्लामी संस्कृति की स्थापना करने निकले थे। उनकी दृष्टि में यह संधि उनकी विजय थी क्योंकि इस संधि ने उनके ध्येय प्राप्त

होने का मार्ग प्रशस्त कर दिया था। परन्तु उनके साथी 1500 मुसलमानों की दृष्टि तत्काल हानि लाभ पर केन्द्रित थी। उनको समझाना कठिन था। अगले दिन ही जब वह ऊंट पर मदीना की ओर जा रहे थे मोहम्मद साहब पर अल्लाह के संदेश उतरने के चिन्ह प्रकट हो गये। मुसलमानों ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया। देखे अल्लाह क्या संदेश दे रहा है।

'निस्सन्देह हम ने तुम्हे (हे मुहम्मद!) विजय प्रदान की, एक खुली विजय'। (कुरान 48:1)

'और अल्लाह की है आकाशों और धरती की सेनायें' और अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है'। (कुरान 48:7)

ताकि तुम लोग अल्लाह और उसकेरसूल पर ईमान लाओं और उसे मदद पहुंचाओं और उसकी प्रतिष्ठा और प्रातः काल और सन्ध्या समय उसकी अल्लाह की तसबीह करों।

जो लोग तुम से हे मुहम्मद बैय्यत सौगन्ध करते है वे अल्लाह ही से बैय्यत करते है। अल्लाह का हाथ उनके ऊपर है। अब जिसने तोड़ दिया वह तोड़ कर अपना ही बुरा करेगा और जिसने उसे पूरा किया जिस की प्रतिज्ञा अल्लाह से की है उसे वह बहुत बड़ा सिला बदला प्रदान करेंगा। कुरान 48:10)

हे नबी जो बद्दू पीछे रह गये थे वे अब तुम से कहेंगे हमारे माल और हमारे धर वालों ने हमें फंसा रक्खा था आप हमारे लिए क्षमा की प्रार्थना कीजिए। ये लोग अपनी जबानों से ऐसी बात कहते है जो इनके दिल में नही है। कहो कौन है जो अल्लाह के यहां तुम्हारे लिए कुछ कर सकता हो यदि वह तुम्हें कोई हानि पहुंचाना चाहे या तुम्हें कोई लाभ पहुंचाना चाहे। अल्लाह उसकी खबर रखता है जो कुछ तुम करते हो।

जल्द ही जब तुम गनीमतें लूट का माल लेने चलोंगे तो यह पीछे रहने वाले कहेंगे हमें अपने साथ चलने दो। ये लोग चाहते है कि अल्लाह की कही बात बदल दे। कहो तुम हमारे साथ नहीं चल सकते। अल्लाह ने पहले से ऐसा ही कह दिया है। तो वे कहेगे नहीं बल्कि तुम हम से ईर्ष्या करते हो। नही बल्कि ये लोग समझते थोड़ा ही है।

नोट : स्पष्ट है कि बहुत से लोग जो युद्धों में मोहम्मद साहब के साथ नहीं गये थे उनके विजयोपरान्त पछताते थे कि वह युद्ध में क्यों नही गये अन्यथा उन्हे भी लूट का माल मिलता। अगली आयत में अल्लाह ऐसे लोगों को बताता है कि अगले युद्धों में उनको फिर अवसर मिलेगा यदि वह मुस्लिम सेना का साथ देंगे।

पीछे रह जाने वाले बद्दुओं से कहो जल्द ही तुम्हें ऐसे लोगों की तरफ चलने को कहा जायेगा जो बड़े ही लड़ाका होंगे तुम उनसे लड़ोगें या वे अधीन हो जायेंगे तो यदि तुम आज्ञा पालन करोंगें तो अल्लाह तुम्हें अच्छा बदला लूट प्रदान करेंगा और यदि तुम फिर गये जैसे पहले फिर गये थे तो वह तुम्हे दुखदायिनी यातना देगा।

निश्चय ही अल्लाह ईमान वालों से राजी हुआ जब कि हे मुहम्मद वे एक वृक्ष के नीचे तुम्हारे हाथ में हाथ देकर तुम से बैअत कर रहे थे और उसने जान लिया जो कुछ उनके दिलों में था फिर उसने उन ईमान वालों पर शान्ति उतारी और बदले में उन्हें विजय दी जो जल्द ही प्राप्त होने वाली है।

और बहुत सी गनीमते लूट जो तुम्हारे हाथ आयेगी। और अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।

अल्लाह ने तुम से बहुत सी गनीमतों लूट का वादा किया है जो तुम्हारे हाथ आयेंगी अब यह तो उसने तुम्हें पहले दे दिया और लोगों के हाथ तुम से रोक दिये और यह इसलिए कि ईमान वालों के लिए एक निशानी हो और वह तुम्हें एक सीधें मार्ग पर लगा दें।

और वही है जिसने उन के हाथों को तुम से और तुम्हारें हाथों को उनसे मक्का के भीतर रोके रक्खा इसके बाद कि उसने तुम्हें उन पर काबू दे दिया था। और अल्लाह देखता है जो कुछ तुम करते हों। कुरान 48:24)

यह वही तो है जिन्होंने कुफ्र किया और तुम्हे मस्जिदें हराम काबा से रोक दिया और कुरबानी के जानवर भी रुकें पड़े रहे अपने ठिकाने तक पहुंचने न पाये। यदि यह बात न होती कि बहुत से ईमान वाले पुरुष और ईमान वाली स्त्रियां है जिन्हें तुम जानते नहीं बेखबरी में तुम उन्हें कुचल देते फिर उनके कारण तुम्हें तकलीफ पहुंचाती तब देखते अब इससे यह होगा कि अल्लाह जिसे चाहे रहमत दयालुता की छाया में दाखिल कर लें कहीं वे अलग अलग रहे होंते तब तो हम उनमें कुफ्र करने वालों को बड़ी ही दुःख भरी यातना देतें।

निस्सन्देह अल्लाह ने अपने रसूल को स्वप्न सच्चा दिखाया जिसमें हिकमत थी। तुम मस्जिदें हराम में जरुर दाखिल होंगे - यदि अल्लाह ने चाहा - बेखटके अपने सिर को मूंड़े हुये और बाल कतरे हुये तुम्हें कोई डर न होगा।

वही है जिसने अपने रसूल को मार्गदर्शन और सच्चे दीन सत्य धर्म के साथ भेजा ताकि वह उसे पूरे के पूरे दीन पर प्रभुत्व प्रदान करें। और अल्लाह का गवाह होना बहुत है। कुरान 48 : 28)

मुहम्मद अल्लाह के रसूल है। और जो लोग उनके साथ है वे काफिरों के लिए कठोर और आपस में दयालु है..... .....।

इस सन्देश के प्राप्त होने के बाद मोहम्मद साहब के साथियों को विश्वास हो गया कि जो संधि की गयी है उसके परिणाम अच्छे होने का समाचार अल्लाह से प्राप्त हो गया है।

इस संधि से कुरैश को कोई लाभ नहीं पहुंचा। मक्का का एक युवक अबू बशीर मुसलमान हो गया था। उसको संधि के अनुसार मोहम्मद साहब ने उसके संरक्षकों को वापिस कर दिया। परन्तु उसने वापिस न जाकर मक्का से उसे लेने आये दो रक्षकों में से एक को मार्ग में ही मार डाला और मदीना वापिस न जाकर मक्का से उसे लेने आये दो रक्षकों में से एक को मार्ग में ही मार डाला और मदीना वापिस आ गया। मोहम्मद साहब ने उसकी प्रशंसा में कहा यह युवक कैसा युद्ध प्रेमी मुसलमान है। काश इसके साथ इसी जैसे मुस्लिम युवकों का एक दल होता।

सर विलियम म्यौर का विचार है। कि मोहम्मद साहब के इन वाक्यों से मार्ग दर्शन प्राप्त करअबू वशीर अपनी ही तरह के पांच मक्का युवकों को साथ लेकर लाल सागर के किनारे किनारे होकर सीरिया जाने वाले मार्ग पर रहने लगा। शीघ्र ही उसे दूसरे साथी मिल गये। और इस दल में 70 लोग हो गये। उन्होंने सीरिया जाने वाले मक्का के व्यवसाई कारवाओं को लूटना प्रारम्भ कर दिया। जो भी व्यक्ति उनके हाथ पड़ जाता उसे कत्ल कर दिया जाता। अपने आने जाने वाले कारवाओं की सुरक्षा ही मक्का निवासियों का हुदैवैयया संधि का उद्देश्य था। परन्तु उनका वह उद्देश्य पूरा नहीं हुआ। आगे चलकर तो एक बार इस्लाम ग्रहण कर उसे छोड़कर जाने वाले को अल्लाह ने मृत्यु दण्ड का आदेश देकर इस्लाम से लौटने का मार्ग बंद ही कर दिया।

खैबर का युद्ध (सितम्बर, 628 हिजरी 7)

खैबर के युद्ध का वर्णन करना इसलिये आवश्यक है कि इस अवसर पर मोहम्मद साहब ने एक सिद्धांत प्रतिपादित किया। इसका उपयोग मुसलमानों द्वारा गैर इस्लामी देशों परबिना किसी उत्तेजनात्मक कार्यवाही के आक्रमण करने के लिये किया जाता रहा है।

अबू हुरैरा से हदीस है कि हम मस्जिद में बैठे थे जब रसूल अल्लाह मोहम्मद साहब वहां आये। उनहोंने कहा : चलो यहूदियों की बस्ती की ओर चलते है। हम चल पड़े। जब हम वहां पहुंचे तो रसूल अल्लाह ने उन्हें पुकार कर कहाः ए यहूदियों। यदि सुरक्षा चाहते हो तो इस्लाम स्वीकार कर लो। उन्होंने कहा जो तुम ने कहा हमने सुन लिया। रसूल अल्लाह ने उनसे दो बार फिर यही कहा और उन्होंने यही उत्तर दिया। तब रसूल अल्लाह ने उनसे कहा सुनो। पृथ्वी अल्लाह और उसके रसूल की है। मै चाहता हूं कि तुम्हें इस भूमि से निकाल बाहर कर दूं। इसलिये तुम लोगों में से जिनके पास कुछ सामान है उसे बेंच डालों। वर्ना याद रखों कि पृथ्वी अल्लाह और रसूल की है और कदाचित तुम्हें सब कुछ यही छोड़कर चले जाना पड़े। (सही मुस्लिम 4363)

बाद में इस्लाम के विद्वानों ने इसी हदीस से यह सिद्धांत बनाया कि पृथ्वी तो अल्लाह और उसके रसूल की है। इसलिये वह मुसलमानों की है। गैर मुसलमानों के पास भूमि अथवा राज्य के होने का अर्थ है मुसलमानों की भूमि अथवा राज्य पर गैर मुसलमानों का गैर कानूनी कब्जा। इब्न तमैया कहते है कि पृथ्वी तो अल्लाह रसूल के माध्यमोहम्मद साहब से मुसलमानों की है। इस सम्पत्ति को गैर मुसलमानों के अन्यायपूर्ण कब्जे से निकालकर उसके विधिवत स्वामियों मुसलमानों को कब्जा दिलाने के लिए युद्ध करना सुरक्षात्मक युद्ध है। इब्न तमैया यह भी कहते है कि मुसलमानों और काफिरों के बीच निरन्तर युद्ध सामान्य स्थिति है और शान्ति तभी जब युद्ध के लिए परिस्थितियां अनुकूल न हों।

अगले वर्ष मोहम्मद साहब ने हुदैवैयया संधि के अनुसार सफलता पूर्वक हज्ज यात्रा की। और काबा मंदिर की जिसमें अभी मूर्तियां ज्यों की त्यों रखी थी परिक्रमा भी की। इस अवसर पर कुरैश के अनेक महत्वपूर्ण योद्धाओं ने इस्लाम स्वीकार कर लिया। मोहम्मद साहब की स्थिति और भी सुदृढ़ हो गई।

हमारा ध्येय इस समय मोहम्मद साहब की सम्पूर्ण जीवनी न लिखकर केवल यह दर्शाने का है कि मदीने की स्थिति में तेजी से बदलाव आ रहा था। इस्लाम और पैगम्बर का विरोध प्रकट करना भी खतरनाक हो गया था। इसलिए कुछ लोग प्रकटतः मुसलमान बन गये थे परन्तु हृदय से इस्लाम और मोहम्मद साहब से शत्रुता रखते थे। इन लोग को कुरान में मुनाफिक कहा गया है और अनेक आयतों द्वारा पैगम्बर को ऐसे लोगों से सावधान रहने के लिए कहा गया हैं साथ ही साथ इस प्रकार के लोगों को बार बार यह धमकी दी गयी है कि अल्लाह उनके दिलों का हल जानता है और समय आने पर उनकों बुरी प्रकार से दंडित किया जाएगा । कुरान में बार बार इस प्रकार के लोगों का वर्णन आया है । वास्तव में एक पूरे के पूरे सूरा (63) का नाच ही अल मुनाफिकन है जो उन्ही लोगों के विषय में

है । मदीने में इस प्रकार के लोगों की बड़ी संख्या में उपस्थिति ही यह दर्शाती है कि अनेक लोग केवल आतंक और भय के कारण ही मुसलमान होने का नाटक करने को मजबूर थें।

शांति सुलह, प्रवचन, मान मनव्वन, मृत्यु उपरांत लोभ (जन्नत के सुख वैभव), भय (दोजख की संत्रणाएं) द्वारा इस्लाम के प्रचार के उपायों के साथ साथ अब युद्ध में विजित लोगों के लिए गुलामी और मृत्यु भय, और विजेता मुसलमानों के लिए लूट का माल और लूट में मिली स्त्रियों जैसे लोभ भी जुड़ गए थे ।

हुदैवैयया की संधि के बाद मोहम्मद साहब ने तुरंत चारों ओर के यहूदी और अरब कबीलों में अपने प्रतिनिधि मंडल भेजने प्रारम्भ कर दिये। इन का ध्येय था : इन लोगों को इस्लाम का निमंत्रण देकर मुसलमान बनान और यदि यह संभव न हो तो उनको मुसलमानों के विरुद्ध युद्ध में किसी दूसरी पार्टी का साथ न देने के लिए वचनवद्ध करना। अगले दो वर्षो में मदीने और उसके आस पास रहने वाले यहूदियों की बस्ती उनसे खाली करा ली गई। उनकी संपत्ति लूट ली गई और मुसलमानों में बांट दी गई। उनके पुरुषों को इस्लाम ग्रहण करने का निमन्त्रण दिया गया। जो लोग इसके लिए तैयार नहीं हुए उन्हें देश से निकाल दिया गया अथव कत्ल कर दिया गया। उनके परिवारों को गुलाम बना लिय गया।

मदीना में हिजरी 1 से हिजरी 10 तक 622-632 ई0 इस्लाम की शक्ति के विस्तार की गति का यथार्थ अनुमान मोहम्मद साहब द्वारा लड़े गये युद्धों में दनके सैनिकों की लगातार बढ़ती संख्या से लग सकता है।

> अनेक अरब कओीले भी जो मक्का काल में इस्लाम के घोर शत्रु थे कुछ लोभ से और कुछ भय से मोहम्मद साहब का साथ देने को वचनबद्ध हो गये। कुछ के साथ पारस्परिक सहायता की संधिया हो गई। मक्का निवासी उनके प्रतिद्वंद्वी कुरैश अलग अलग पड़ गये। एक आध कबीले को छोड़कर युद्ध में उनका साथ देने वाला कोई न रहा।

मक्का विजय (जनवरी 630 ई0, हिजरी 8)

संधि को हुये दो वर्ष ही हुये थे कि कुरैश से संधि बद्ध अरब कबीले बनी बकर और मोहम्मद साहब से संधिबद्ध कबीले खोजा में कुछ विवाद हो गया। बनी बकर ने खोजा के कुछ लोगों को कुरैश की मदद से कत्ल कर दिया। खोजा ने मोहम्मद साहब से सहायता मांगी। मार्च 628 की हुदैवैयय की 10 वर्ष की संधि का अंत हो गया। 10000 मुस्लिम सेना के साथ जनवरी 630 ई0 हिजरी 8 में मोहम्मद साहब ने मक्का पर चढाई की। मुस्लिम सेना का इतना आतंक था कि मदीना निवासी अपने घरों को छोड़कर पहाड़ियों में चले गये। मक्का पर मोहम्मद साहब का लगभग बिना रक्त पात शांतिपूर्वक कब्जा हो गया। मोहम्मद साहब ने काबा मंदिर में प्रवेश किया। वहां रखी सभी मूर्तियां लगभग 360 बाहर ला ला कर तोड़ डाली गई। मक्का में पहली अजान दी गई और नमाज पढ़ी गई।

जिस मक्का में मदीना जाने से पहले तीन वर्षो में मोहम्मद साहब शान्तिपूर्ण प्रचार द्वारा एक भी धर्मान्तरण नहीं कर पाये थे अब कुछ ही दिनों में मक्का के लगभग सभी परिवार मुसलमान हो गये। एक महीने बाद ही हुनैन के युद्ध में चलते समय मोहम्मद साहब के साथ 12000 सैनिक थे 10000 सैनिक जो मदीने से उनके साथ आये थे और 2000 मक्का के नये सैनिक। जिन मक्का निवासियों ने सन्धि पत्र में मोहम्मद साहब को अल्लाह का रसूल लिखने पर कठोर आपत्ति की थी वह सभी मक्का विजय के पश्चात तुरन्त मुसलमान हो गये। इस चमत्कार का कारण इस्लाम का शांतिमय प्रचार था अथवा मोहम्मद साहब द्वारा अपनायी गयी बल प्रयोग की नीतियां इसका उत्तर पाठ्क स्वयं सोच सकते है।

मक्का विजय के तुरन्त बाद चारों ओर मुस्लिम सेनायें स्थानीय देवी देवताओं की मूर्तियां विध्वंस करने के लिए भेज दी गयीं। सेना के वहां पहुंचने पर यह मूर्तियां ध्वस्त कर दी गयी। उनके उपासक मुसलमान बना लिये गये।

हुनैन का युद्ध (जनवरी 630 ई0, हिजरी-8)

मक्का के दक्षिण पूर्व का पहाड़ी क्षेत्र हवाजीन नामक कबीले का गृह क्षेत्र था। उसकी अनेक शाखाएं अल तैफ से आगे पहाड़ों में बिखरी पड़ी थी। अल तैफ बनी थाकिफ का जो इसी कबीले की शाखा थी केन्द्रीय नगर था। यह लोग कट्टर मूर्ति और उसके आस पास की मूर्तियों के विध्वंस से इन लोगों में मुस्लिमों द्वारा अपने उपास्यों की मूर्तियों के विध्वंस होने का भय व्याप्त हो गया। तुरन्त सभी शाखाओ को अल तैफ के उत्तर पूर्व में औतास नामक घाटी में इकट्ठे होने का संदेश भेज दिया गया।

मोहम्मद साहब को मदीना छोड़े अभी केवल एक महीना हुआ था। औतास में विद्रोहियों के इकट्ठें होने की सूचना पाकर उनको अपने 12000 सैनिकों के साथ विद्रोह दबाने के लिए प्रस्थान करना पड़ा। कुछ कठिनाइयों के

पश्चात मुसलमानों की विजय हुई परन्तु अल तैफ की सेनायें बचकर निकल गई। शेष शत्रुओं की सेना के साथ उनकी स्त्रियां और बच्चे भी थे। पराजित सेनाओं की भगदड़ में यह परिवार मुसलमानों के हाथ पड़ गये। अपने परिवारों की सुरक्षापर्वक वापसी के लिए विरोधी इसके लिए तैयार हो गये कि वे इस्लाम स्वीकार कर लें और अपनी लूटी हुई सम्पत्ति की मांग न कर अपने परिवारों को वापिस ले जाँय। इस प्रकार सभी पराजित कबीले मुसलमान हो गये।

मूर्ति पूजक अल तैफ मूर्ति पूजक ही बना रहा। उसके चारों ओर के कबीले मुसलमान हो चुके थे। इन मुसलमानों के गिरोह उनके पशुओं को चरागाहों और पानी पीने के स्थानों पर काट डालते थे। अन्त में हालत यह हो गयी कि नगर की किलेबन्दी के बाहर जाना तक भी सुरक्षित नहीं रहा। अब तैफ निवसी यह सोचने पर मजबूर हो गये 'हम चारों ओर से मुसलमानों से घिरे है। हममें इतनी शक्ति नही है। कि उनका सफलतापूर्वक सामना कर सकें।'
(दिसम्बर 630 ई0 हिजरी 9)

अल तैफ द्वारा आत्मसमर्पण (दिसम्बर 630 ई0 हिजरी 9)

उपरोक्त परिस्थितियों में कोई दूसरा मार्ग न देखकर तैफ के मुखिया जनों का एक प्रतिनिधिं मंडल मोहम्मद साहब से मिलने गया। वह इस्लाम स्वीकार करने को तैयार थे परन्तु यह चाहते थे कि उनकी मुख्य उपास्य अल-लात की मूर्ति को कुछ समय के लिये तोड़ा न जांय। मोहम्मद साहब ने इससे स्पष्ट इन्कार कर दिया। **उन्होंने कहा : बिना एक दिन की भी छूट के मूर्ति अविलंब नष्ट करनी पड़ेगी। इस्लाम और मूर्तियों का सहअस्लित्व संभव नहीं है।** (म्यौर पृ0 450) क्या मूर्ति भंजन की इससे अधिक स्पष्ट घोषणा हो सकती है?

अबू सूफियान और अल मौघीरा देव मूर्ति को नष्ट करने के लिए तैफ भेजे गये। अल मौघीरा ने गेंती से उस विशाल मूर्ति को तोड़ डाला। स्त्रियां रोती विलखती और छाती पीटती रही। (म्यौर पृ0 451)

नोट - बामियान की बुद्ध मूर्तियों का तालिबान सरकार द्वारा विध्वंस मुस्लिम विद्वानों द्वारा गैर इस्लामी प्रचारित किया गया। यद्यपि उनका यह आचरण मोहम्मद साहब के अलतैफ की मूर्ति के विषय में दिये गये आदेश के बिल्कुल अनुरुप था। स्पष्ट है कि इस प्रकार का प्रचार झूठ है और राजनीति से प्रेरित है।

अरेबिया से मूर्ति पूजा को पूर्णतया निष्कासित करने की घोषणा (मार्च 631 ई0 हिजरी-9)

हज्ज का समय फिर आ गया था। अभी तक काबा की हज्ज यात्रा में मुसलमान और मूर्ति पूजक सभी बिना भेद भाव सम्मिलित होते आये थे। अब मोहम्मद साहब की शक्ति इतनी बढ़ गई थी कि उन्होंने अरब देश को गैर मुसलमानों और अल्लाह के अतिरिक्त दूसरी पूजा पद्धति से मुक्त करने का निश्चय कर लिया। गैर मुसलमानों और मुसलमानों की सम्मिलित हज्ज यात्रा में जाना स्वीकार्य नहीं रहा। परन्तु उपरोक्त निश्चय से पहले अबू बकर के नेतृत्व में लगभग 300 मुसलमानों का जत्था मदीना से मक्का के लिए हज्ज यात्रा पर निकल चुका था। अली को तुरंत इन आदेशों की सर्व साधारण को सूचना देने के लिये अबू बकर के जत्थे के पास भेज दिया गया। यात्रा के अंतिम दिनों में बलि वाले दिन जब मीना पर कंकड़ फेंके जाते है अली ने उस सकरी घाटी में एकत्रित लोगों में इस आदेश की घोषण कर दी। (देखे सूरा 9) म्यौर पृ0-452

अल्लाह और उसके रसूल की ओर से उन मुश्रिकों (जो अल्लाह के साथ साथ दूसरे उपास्यों की भी पूजा करते है) को साफ जवाब है जिनके साथ तुम ने सन्धि की थी। (कुरान 9:1)

तो (हे मुश्रिकों।) इस भू भाग में चार महीने और चल फिर लो और जान लो कि तुम अल्लाह को हरा नहीं सकते और यह कि अल्लाह काफिरों को अपमानित करने वाला है। (कुरान 9:1)

और अल्लाह और उसके रसूल की ओर से बड़े हज्ज के दिन लोगों के लिए मुनादी की जाती है कि अल्लाह मुश्रिकों (के प्रति जिम्मेदारी) से बरी है और उसका रसूल भी। तो यदि तुम लोग तोबा कर लो तो यह तुम्हारे ही लिए अच्छा है परन्तु यदि तुम मुंह मोड़ते हो तो जान लो कि तुम अल्लाह को हरा नहीं सकते। और जिन लोगों ने कुफ्र किया है उन्हें दुःख देने वाली यातना की मंगल सूचना दे दों। (कुरान 9:1)

सिवाय उन मुश्रिकों के जिन से तुमने सन्धि की फिर उन्होंने तुम्हारे साथ कोई कमी नहीं की और न तुम्हारे मुकाबल में किसी की सहायता की तो उनके समझौते को उनके नियत समय तक पूरा करो। निस्सन्देह अल्लाह डर रखने वालों से प्रेम रखता है। (कुरान 9:4)

फिर जब पवित्र महीने बीत जाये तो मुश्रिकों को जहां कहीं पाओं कत्ल करों और उन्हें पकड़ों और उन्हे घेरों और हर घात की जगह उन की ताक में बैठों। फिर यदि वे तौबा कर लें और नमाज कायम करें और जकात दें

(अर्थात मुसलमान हो जांय) तो उनका मार्ग छोड़ दो। निस्सन्देह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है। (कुरान 9:5)

5

अब हम अपने प्रयास की ओर लौट्ते है जिससे हमने यह निबन्ध शुरु किया था कि इस्लाम में शांति और तलवार की भूमिका क्या है?

पिछले पन्नों के अध्ययन से पाठकों को यह स्पष्ट हो गया होगा कि इस्लाम के शांति पूर्ण मानवतावादी अहिंसात्मक रुप के प्रमाणस्वरुप विद्वानों द्वारा जो आयतें अथवा प्रसंग उद्धृत किये जाते है वह मक्का काल से सम्बन्ध रखते है। मक्का काल की परिस्थिति में इसके अतिरिक्त कोई दूसरा विकल्प नहीं था। मोहम्मद साहब के ह्रदय में मूर्ति पूजा और बहु देवता पूजा और अरब देश में प्रचलित कुछ दूसरी कुरीतियों (नवजात बच्चों को गाड़ देना मदिरापान जुआ वाणिज्य में बेईमानी आन्तरिक कबीला युद्ध इत्यादि) के विरुद्ध जो अग्नि धधक रही थी उसमें प्रारम्भ से लेकर मृत्यु तक कोई बदलाव नहीं आया। इन पूजा पद्धतियों को नष्ट करने और उपरोक्त सामाजिक सुधार करने के लिए परिस्थितियों के अनुसार जैसे जैसे उनको अवसर प्राप्त होते रहे और उनकी शक्ति बढ़ती रही उनके साधन भी बदलते गये।

मदीना काल इस्लाम का उग्र रुप है। यह दण्ड प्रधान है। मदीना में उतरी आयतों में उपदेश परामर्श मान मनौवन बुरे कर्म फल के बदले में दोजख की आग की चेतावनी अच्छे कर्मो के बदले में जन्नत के अपूर्व सुख भोगों का लोभ तो दिया ही गया अब इसमें दुराग्रही लोगों के लिए तलवार और परिवार की गुलामी जैसे भय भी जुड़ गये। पैगम्बर अल्लाह के संदेश वाहक तो रहे परन्तु अब उनके आदेशों में एक शासक की खनक भी स्पष्ट देखी जा सकती है। मक्का इस्लाम के प्रस्फुटिक होने का शांतिकाल था तो मदीना इस्लाम का आक्रामक काल था। इस्लाम का वास्तविक अभ्युदय मदीना काल से ही प्रारम्भ हुआ।

मक्का और मदीना में अवतरति इन विपरीत प्रभावों वाली आयतों का समन्वय कैसे किया जाय उसके विषय में कुरान स्वयं ही मदीने में उतरी एक आयत द्वारा निर्देश देती है : हम जो कोई आयत निरस्त कर देते है या भुलवा देते है तो उससे अच्छी या उस जैसी दूसरी आयत लाते है। क्या तुम नहीं जानते कि अल्लाह का हर चीज का सामर्थ्य प्राप्त है। (कुरान 2:106) इसके पश्चात मदीनें में निम्नलिखित आयत उतरी : फिर जब पवित्र महीने बीत जांय तो मुश्रिकों को जहां कही पाओं कत्ल करो और उन्हें पकड़ों और उन्हें घेरे और हर घात की जगह उनकी ताक में बैठो। फिर यदि वे तोबा कर लें और नमाज कायम करे और जकात दें (अर्थात् मुसलमान हो जायँ) तो उनका मार्ग छोड़ दो। निसन्देह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है। (कुरान 9:5)

इस सिद्धान्त के अनुसार मुस्लिम विद्वानों का यह मानना है कि आयत कताल 9:5 के अवतरण के बाद वह तमाम आयतें जो कुफ्र और काफिरों के प्रति (मूर्ति बहुदेवता पूजा तथा मोहम्मद साहब की पैगंबरी से इंकार करना) सहनशीलता का उपदेश करती है निरस्त हो गई है। वास्तव में अबू बक्र इब्न अल अरबी का जो कुरान के दिग्गज व्याख्याकारों में माने जाते है कहना है कि यह बायत कताल इससे पहले अवतरित 124 आयतों को जो कुफ्र के साथ किसी प्रकार की सहनशीलता या समझौता करने की अनुमति देती दिखायी देती है निरस्त की जा चुकी है। (डा0हर्ष नारायण : जिजिया पृ. 4)

18वीं शताब्दी के महान मुस्लिम विद्वान और विचारक शाहवली उल्लाह जिनकी रचनायें सभी मदरसों मकतवों में आदर के साथ इस्लाम की प्रमाणिक व्याख्यायें मानी जाती है इस स्थिति की विवेचना करते हुए लिखते है : इस्लाम की घोषणा के पश्चात बल प्रयोग बल प्रयोग नहीं समझा जाता। (डां0 हर्ष नारायण जिजिया पृ0-4)

इस सम्बन्ध में सैयद कुत्व इस बात पर बल देते है कि धर्म चुनने की स्वतंत्रता तो तभी होगी जब दमनात्मक परिस्थितियां हटा दी जायं और यह उन्हीं स्थानों पर सम्भव है जहां लोगों को अल्लाह के मानव हित के दर्शन का अनुसरण और अनुभव करना सम्भव हो। उनका कहना है कि यदि इसके रास्ते में कोई बाधायें है तो यह आवश्यक हो जाता है कि पहले उन बाधाओं को बल पूर्वक हटा दिया जाय जिससे मानव ह्रदय और मस्लिष्क को उनके बन्धनों से मुक्त कर सीधें उपदेश दिया जा सके। (सैयद कुत्व : म-आलिम पृ0-90 जांन एल एसपासिटो रिसर्जेन्ट इस्लाम पृ0-62)

उपरोक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस्लाम का प्रचार प्रसार प्रत्येक मुसलमान का सर्वप्रथम धार्मिक कर्तव्य है। उस कर्तव्य को निभाने के लिए वह सभी हिंसात्मक और अहिंसात्मक उपायों का उपयोग परिस्थिति अनुसार कर सकता है। भारतवर्ष में दोनो प्रकार के साधनों का उपयोग समय समय पर किस प्रकार किया गया यह 712 ई0 से लेकर आज तक के भारतीय इतिहास के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है। केवल भारत में ही नहीं इस्लाम जहां भी गया उसका व्यवहार अल्लाह के इन्हीं आदेशें के अनुकूल रहा।

इसलियें अफगानिस्तान में सत्तारुढ़ तालिबान द्वारा बमियान की मूर्तियों को सैनिक उपकरणों से ध्वस्त करना इस्लाम की दृष्टि से न्यायोचित सिद्ध होता है। इसी प्रकार काश्मीर में आतंकवाद फैलाने में लिप्त मुस्लिम जिहादी संस्थायें भी अपने कार्य को न्यायोचित सिद्ध करती है। इसके बिल्कुल विपरीत मौलाना वहीदुद्दीन खां इत्यादि दूसरे विद्वान भारतीय मुसलमानों को मदीना और हुदैवैयय की संधि के अनुसार आचरण करने का उपदेश करते रहते है। यद्यपि वह अच्छी तरह जानते है कि दोनों प्रकार की गतिविधियों का अन्तिम उद्देश्य सम्पूर्ण भारत का इस्लामीकरण ही है। अपने इस उद्देश्य को वह ईमानदारी से अपने लेखों और वक्तव्यों से स्पष्ट करते रहते है। यह दूसरी बात है कि इस्लाम की कुफ्र को मिटाने और इस्लामी वक्तव्यों से स्पष्ट स्थापित करने की मूलभूत और अनिवार्य प्रतिबद्धता को न समझने के कारण हिन्दू इन दो श्रेणी के विद्वानों के वक्तव्यों से भ्रमित होकर कुछ मुसलमानों को कट्टरवादी अथवा आतंकवादी कह कर उनसे घृणा करते है और दूसरे को राष्ट्रीय अथवा उदारादी कह कर उनकी प्रशंसा करते है यद्यपि दोनों का उद्देश्य एक ही है केवल रणनीति अलग अलग है।

मदीने और हुदैवैय्या की संधियां-

भारत में खिलाफत (1921-24) आंदोलन का कारण यह था कि दूसरे विश्व युद्ध में अंग्रेज जर्मनी के विरुद्ध विजयी हो गये थे। इस युद्ध में टर्की ने जर्मनी का साथ दिया था। टर्की एक महत्वपूर्ण और विशाल मुस्लिम साम्राज्य था। मिस्त्र अरेबिया सीरिया जार्डन ईरान और ईराक इत्यादि अनेक देश उसके अंग थे अथवा टर्की के सुल्तान को जो पैगम्बर मोहम्मद साहब का धार्मिक उत्तराधिकारी (खलीफा) समझा जाता था अपना धार्मिक और राजनीतिक नेता स्वीकार करते थे। उसके आदेशों के पालन करने को बाध्य थे। मक्का मदीना जो इस्लाम के अत्यन्त महत्वपूर्ण धार्मिक केन्द्र है उसके साम्राज्य के अंग थे।

युद्ध में जर्मनी/टर्की की पराजय के पश्चात अंग्रेजी ने टर्की साम्राज्य को विघटित कर दिया। अलग अलग देशों में अलग राज्य स्थापित कर दिये गये और उनको अपना संरक्षण प्रदान कर दिया।

टर्की में मुस्तफा कमाल पाशा नामक एक युवा फौजी अफसर की कमान में सैनिक क्रान्ति हो गई जिसमें इस्लाम और खलीफा को टर्की के अपमान और साम्राज्य विघटन का कारण मानते हुए उसे टर्की से निष्कासित कर दिया गया। खलीफा का पद समाप्त कर दिया गया। टर्की में तेजी से पश्चिमी शिक्षा और पश्चिमी संस्कृति का प्रवेश हो गया। भारतीय मुसलमानों में इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। उन्हें लगा कि अल्लाह ने उन्हें भुला दिया है और इस्लाम संसार से समाप्त प्रायः है। फलस्वरुप अंग्रेजो के विरुद्ध उनका क्रोध और क्षोम उबल पड़ा क्योंकि अंग्रेज ही इस परिस्थिति के जनक थे। यह लगभग उसी प्रकार की परिस्थिति थी जिसने मुगल साम्राज्य की अंग्रेजो द्वारा पराजय के पश्चात 1857 ई0 के विद्रोह का जन्म दिया था। परन्तु अब 1857 नहीं था। अंग्रेजो के पैर भारत में और विश्व में भी मजबूती से जम चुके थे। उनका शासन तंत्र किसी छोटे मोटे सैनिक विद्रोह से नहीं उखाड़ा जा सकता था। गांधी जी अहिंसा और सत्याग्रह के द्वारा अफ्रीका में अंग्रेजो के अत्याचारों के विरुद्ध विजय प्राप्त कर लौटे थे और उन्होंने भारत में भी इन्हीं हथियारों द्वारा से लड़ना अधिक तर्कसंगत लगा। गांधी जी भी यह सोचकर कि शत्रु का शत्रु मित्र होता है इन नेताओं के साथ हाथ मिलाने को उत्सुक थे। फलस्वरुप तुरन्त ही गांधी जी को कांग्रेस और खिलाफत नेतृत्व ने एक जुट होकर अंग्रेजो को भारत से भगाने के लिए एक तीव्र आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया।

इस आन्दोलन के जिसे खिलाफत आन्दोलन कहा गया शीर्ष नेता थे अलीगढ़ विश्वविद्यालय के पढ़े घोर साम्प्रदायिक और कट्टरवादी मौलाना मोहम्मद अली और शैकतअली बन्धु हकीम अजमल खां देवबन्द मदरसे के सर्वेसर्वा मौलाना अबुल कलाम आजाद इत्यादि।

खिलाफत के नेताओं का स्पष्ट उद्देश्य विश्व में इस्लाम की खोयी हुई प्रतिष्टा और सामरिक शक्ति को पुर्नस्थापित करना था। उसके नेता कट्टर मौलाना थे जिनका आदर्श मोहम्मद साहब की जीवनी और जिनकी नीति पुस्तक कुरान और हदीस थी। परन्तु गांधी को जो अपने को राजनीति में अहिंसा और असहयोग को एक ब्रहमशास्त्र के

रुप में स्थापित करने वाले परम गुरु पद की आकांशा रखते थे अपने कथित मुस्लिम मित्रों के इस वास्तविक रुप को देखकर भी अनदेखा करना उपयुक्त लगा।

उस समय गांधी जी का व्यक्तित्व हिन्दुओं पर इस प्रकार छा गया था कि वह उनके पीछे चलकर समुद्र में डूबने को भी तैयार थे। फलस्वरुप हिन्दुओं के सर्वोच्च धार्मिक नेता शंकराचार्य को जिनको किसी हिन्दू द्वारा स्पर्श किया जाना भी स्वीकार नहीं था मुस्लिम नेतृत्व ने इस प्रकार के फोटो और हिन्दू नेताओं का जमकर उपयोग किया। नगर नगर गांव गांव गली गली मोहम्मद अली शैकत अली और गांधी की जय के नारे से गूंज उठे। हिन्दू संख्या में मुसलमानों से चार अथवा पांच गुने थे। उनके सहयोग से ब्रिटिश जेले भर गयी। सैकड़ों हिन्दू पुलिस फायरिंग में मारे गये और कुछ नवयुवक इस जुनून में क्रान्ति का मार्ग अपनाकर फांसी पर झूल गये।

पीछे मुड़कर देखने पर विश्वास नहीं होता कि किस प्रकार हिन्दुओं जैसा बड़ा सम्प्रदाय इतने समय तक मूर्ख बनाया जा सकता है।

किन्तु राष्ट्रीयता अहिंसा और हिन्दू मुस्लिम एकता का मुखौटा लगाये इन मुस्लिम नेताओं की वास्तविक खोज और आकांक्षा क्या थी वह उनके उस समय दिये गये साक्षात्कारों और वक्तव्यों से एक साधारण बुद्धि के व्यक्ति को भी स्पष्ट हो जानी चाहिए थी।

हकीम अजमल खां ने जो सन् 1921 में कांग्रेस और खिलाफत कांन्फ्रेन्स दोनों के अध्यक्ष थे अहमदाबाद में खिलाफत कांन्फ्रेन्स के वार्षिक अधिवेशन में अध्यक्ष पद से बोलते हुये कहा था : एक ओर भारत और दूसरी ओर एशिया माइनर भावी इस्लामी संघ में जोड़ने जा रही है। (आइ. ए. आर. 1922, पृ0447)

मौलाना अबुल कलाम आजाद का दृष्टिकोण भी उनके उस लेक्चर से स्पष्ट हो जात है जो उन्होंने अपने द्वारा स्थापित मदरसे के मुस्लिम युवकों को दिया था .... भारत जैसे देश को जो एक बार मुसलमानों के शासन में रह चुका है कभी भी त्यागा नहीं जा सकता और प्रत्येक मुसलमान का कर्तव्य है कि उस पर खोई हुई मुस्लिम सत्ता को फिर प्राप्त करने के लिय प्रयत्न करे। (नन्दा : गांधी पैन इस्लामिज्य इम्पीरियलिज्म पृ-114)

यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि दोनों कांग्रेस अध्यक्ष हकीम अजमल खां और आजाद अंग्रेजो से स्वतंत्रता प्राप्त करने की आकांक्षा इसलिये करते है कि भारत में फिर से मुस्लिम सत्ता को स्थापित किया जाये । यही आकांक्षा 1857 ई0 के गदर का कारण बनी थी।

उस समय के समाचार पत्रों पत्रिकाओं में इन आकांक्षाओं पर खुले रुप से प्रचार किया जा रहा था। लाहौर से निकलने वाले मुस्लिम आउट्लुक ने अपने सितम्बर सन् 1925 के अंक में लिखा था : लेजिस्लेटिव असेम्बली में प्रस्तुत की गई मांगो को हमने इसलिए स्वीकार कर लिया कि जब ब्रिटिश भारतीयों को आत्म समर्पण करेंगे तो स्वाभाविक है कि मुसलमान उनके स्थान पर सत्ता हस्तगत कर लेंगे। यदि आवश्यक हुआ तो अफगानों की सहायता से। यद्यपि हम जानते है कि इससे पहले कि मुसलमान भी ईमानदारी से घोषणा कर सकें कि वह स्वतन्त्रता के इच्छुक है अथवा उसके योग्य भी है तंजीम संगठ्न का काफी कार्य करने को शेष है। किन्तु हम यह भी समझते है कि युद्ध से अधिक शिक्षाप्रद कुछ भी नहीं है और हिन्दुओं से स्वस्थ युद्ध के फलस्वरुप दोनों पक्षों को लाभ होगा। यदि युद्ध के उपरान्त कुछ हिन्दू शेष रह गये।

दूसरे शब्दों में हमें हिन्दू राजनीतिज्ञों को अपने हथियार के रुप में प्रयोग करने में और साथ ही साथ उन्हें इस सच्चाई से स्पष्ट रुप से अवगत करा देने में कोई आपत्ति नहीं है कि जब अगली बार भारत पर मुस्लिम शासन करेंगे जिसकी हमें आशा है तो हम आश्वस्त है कि वह सुल्तान महमूद गजनवी औरंगजेब द्वारा अधूरे छूटे हुए कार्य को पूरा कर देंगे। (ए हिन्दू नेशनलिस्ट : (गांधी मुस्लिम कांसप्रेसी पृ0 121-22) अर्थात् यहां से हिन्दुओं का सफाया कर देंगे।

लाहौर का मुस्लिम आउट्लुक सर फजले हसन की पत्रिका थी और यह तर्क दिया जा सकता है कि मुस्लिम कांग्रेस जनों की नीति उस नीति से बिल्कुल उलटी थी जो ऊपर के उद्धरण में वर्णित है। इस भ्रम के पूर्णतया निराकरण के लिए हम 18.10. 1925 की पीपुल नामक पत्रिका के अंश उद्धरत करते है जिससे पाठकों को यह स्पष्ट हो जाय कि मुस्लिम आउट्लुक और कांग्रेस के एक विशिष्ट मुस्लिम नेता डां. किचलू के विचारों में कितना अन्तर है? पीपुल लिखता है : लाहौर के मुस्लिम आउट्लुक (सर फज़ले हसन कट्टरवादी मुस्लिम नेता) और अमुतसर के तंजीम (डां. किचलू एक विख्यात कांग्रेस मुस्लिम नेता की पत्रिका) में आजकल इस प्रश्न पर जोरदार बहस छिड़ी हुई है कि ब्रिटिश शासन के पश्चात भारत में मुस्लिम राज्य होगा अथवा इस्लामी राज्य।

नोट – कोई भी राज्य जहां राज्य पूर्णतया मुसलमानों के हाथ में हो मुस्लिम राज्य कहलाता है परन्तु वह इस्लामी राज्य तभी कहला सकता है जब मुस्लिम शासन उस राज्य में पूर्णतया शरीयत कानून लागू करता हो।

मुस्लिम आउटलुक का स्पष्ट मत है कि अंग्रेज या तो राजी से भारत में मुस्लिम राज्य बन जाने देंगे अन्यथा उनके यहां से जाते ही यहां के मुसलमान अफगानों के सहयोग से तलवार केबल पर इसे प्राप्त कर लेंगें। तंजीम का कहना यह है कि यद्यपि मुस्लिम राज्य उनका ध्येय है किन्तु भारत की विशेष परिस्थिति के कारण हिन्दुओं के साझे में इस्लामी राज्य भी उन्हें स्वीकार होगा। आउटलुक इसका उत्तर यह देता है कि हिन्दुओं के साझे में इस्लामी राज्य सम्भव नहीं है। क्योंकि हिन्दुओं से इस्लाम के अनुसार आचरण करने की आशा ही नहीं की जा सकती। (उपरोक्त पृ0–121–22)

उपरोक्त उद्धरण किसी गोपनीय दस्तावेज के अंश नही है। यह उस समय साधारण चर्चा के विषय थे। कांग्रेस नेतृत्व हिन्दू मुस्लिम एकता के लिए मुस्लिम शासन द्वारा 1000 वर्ष तक हिन्दुओं पर किये गये अत्याचारों को भुलाकर इस सीमा तक उतर आया था कि मोहम्मद अली द्वारा अफगानिस्तान के अमीर को भारत पर आक्रमण करने के लिए गांधी जी का अनुमोदन प्राप्त हो गया (श्रद्धानन्द)। यह पत्र अंग्रेजी खुफिया पुलिस के हाथ पड़ जाने से यह स्कीम धरी की धरी रह गई। अली बन्धु गिरफतार कर लिये गये और ब्रिटिश सरकार ने उनको किसी दशा में भी रिहा करने से इन्कार कर दिया।

हिन्दू नेतृत्व इस सीमा तक इस्लाम से अनभिज्ञ था कि इन सार्वजनिक घोषणाओं और लेखों को उसने कोई महत्व नहीं दिया। उनके इस भ्रम में मुस्लिम नेतृत्व बड़ी चतुरता से यह कहकर प्राण फूंकता रहा कि जिस प्रकार मोहम्मद साहब ने मदीने में यहूदियों के साथ संधि कर एक संगठित राष्ट्रीयता पैदा की थी उसी प्रकार भारत में हिन्दू मुसलमानों की एक संगठित राष्ट्रीयता उत्पन्न की जा सकती है।

इस भ्रम को फैलाने और उसमें प्राण फूंकने का कार्य जो नेतृत्व कर रहा था उसकों राष्ट्रीय मुस्लिम कहा जाता था। देवबन्द मदरसे के सर्वेसर्वा और मुस्लिम धर्माचार्यो के नेता मौलाना हुसेन अहमद मदनी इस तर्क के पक्ष में अनेक लेख लिख रहे थे। परन्तु मुसलमानों में कुछ विद्वानों थे जो इस्लाम के नाम पर इस प्रकार झूठे प्रचार की कूटनीति भी पसन्द नहीं करते थे। उनमें से एक थे मौलाना अबू आला मौदूदी तथाकथित कट्टरपंथी जमाते इस्लामी के संस्थापक। उनका कहना था : जिन अर्थो में आजकल कौमियत शब्द का प्रयोग होता है उन अर्थो में काफिरों मुशरिकों और मुसलमानों की एक कौमियत में जमा होने की बात कुरान शरीफ में कहीं भी ठीक नहीं बतायी गयी है। जहां तक मदीने की संधि का प्रश्न है उसको आज कल की राजनीतिक भाषा में ज्यादा से ज्यादा फौजी इत्तहाद कहा जा सकता है। उन्होंने लिखा कि इस इकरारनामें के अनुसार यहूदी अपने दीन पर रहेंगें और मुसलमान अपने दीन पर दोनों की नागरिक और राजनीतिक हैसियतें अलग अलग रहेंगी। अलबत्ता एक पार्टी पर जब कोई हमला करेगा तब दोनों पर्टियां मिलकर लड़ेंगी और दोनों इस युद्ध में अपना अपना माल मिलाकर खर्च करेंगी। दो तीन साल के अन्दर ही इस सन्धि का खात्मा हो गया ओर मुसलमानों ने कुछ यहूदियों को देश के बाहर निकाल दिया और कुछ को मार डाला। (मौलाना मौजूदी : मसलम कौमियत पृ0 54)

मौदूदी साहब के इस बयान के बाद मदनी साहब के पास कुछ कहने को नहीं रह गया। उनको स्वीकार करना पड़ा कि 'मुत्तहिदा कौमियत (joint nation) और आजादी के लिए तथा स्मृद्धि के लिए एकजुट होकर कोशिश करना एक विशेष परिस्थिति है जिसका ताल्लुक सिर्फ सर जमीने हिन्द और उस पर बसने वालों से है .... यह एक अस्थाई और अवास्तविक स्थिति है और जब तक किसी मुल्क में भिन्न भिन्न मजहब के लोग बसते है तभी तक इसकी जरुरत है। सब के सब मुसलमान हो जाने के बाद जो कि सबसे पहला और असली ध्येय है यह बाकी नहीं रहती अर्थात् इसकी आवश्यकता नहीं रहती'।

मदीने की संधि का जो परिणाम यहूदियों को अपने देश में भोगना वहीं भारत में हिन्दुओं को भोगना पड़ा। खिलाफत आन्दोलन स्वयं मुस्लिम देशों द्वारा ही अस्वीकार कर दिया गया। जो मुस्लिम देश स्वतंत्र हो गये थे वह किसी भी प्रकार खलीफा की नियुक्ति और उसके अधीन रहने के लिए तैयार नही थे। खिलाफत आन्दोलन की असफलता के तुरन्त बाद मुस्लिम नेतृत्व को हिन्दू सहयोग की आवश्यकता नहीं रही। इसलिए जो व्यवहार यहूदियों के साथ मदीने में हुआ था वही व्यवहार भारत में हिन्दुओं के साथ उन स्थानों पर हुआ जहाँ-जहाँ वह अल्पसंख्यक थे।

अब वहीदुद्दीन खां साहब इस बात पर बहुत बल दे रहे हैं कि मुसलमानों को आज की परिस्थितियों में हुदैबैय्या संधि की परिस्थितियों के अनुसार आचरण करना चाहिए। खां साहब भी दूसरे मौलानाओं की भांति अपने मजहब के

विषय में कोई गलत बयानी नहीं करते किन्तु मदनी साहब की भांति कड़ुवे सत्यों को मीठी चाशनी में लपेट कर पंश करते हैं। अपनी पुस्तक 'इस्लाम एण्ड पीस' में उन्होंने मक्का काल की आयतो के उपयोग द्वारा अस्लाम को शान्ति का धर्म सिद्ध करने के लिए चिरपरिचित तर्क दिये हैं। पिछले अध्यायों के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिए कि इन आयतों का वास्तविक महत्त्व क्या है?

वहीदुद्दीन खां साहब की पूरी पुस्तक पढ़ने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि खां साहब का ध्येय भी वही है तो सदैव से इस्लाम का उद्घोषित ध्येय रहा है : सभी दूसरे मजहबों, संस्कृतियों और दर्शनों को नष्ट कर जिनको ि कवह झूठा और अंधकारयुक्त मानता है उनके स्थान पर इस्लाम का वर्चस्व, इस्लामी संस्कृति और इस्लामी राज्य की स्थापना करना ।

खां साहब इस समय को हिंसा की शरण न लेकर दूसरे माध्यमों द्वारा भारतवर्ष को इस्लामी देश बनाने के लिए उपर्युक्त मानते हैं । और इसके लिए हुदैबइया की संधि का आदर्श पेश करते है । हुदैबइया की संधि के बाद मक्का के गैर मुस्लिमो का जो हश्र हुआ व हम पीछे दिखा चुके हैं । पूरा मक्का एक दो दिन में ही मुसलमान हो गया । वहीदुद्दीन साहब का ध्येय भारत को मक्का की भांति इस्लामी देश बनाने का है यह उनकी इसी पुस्तक के अंतिम अध्यायों से स्पष्ट हो जाता है । उपयुक्त समय और परिस्थितियां आने तक भारतीय मुसलमानों को मक्का के शांति काल के आदर्श को ही मानना चाहिए । हुदैबइया की तरह ।परिस्थितियां अनुकूल हो जाएं और र्प्यापत शक्ति संचय हो जाए तो आयत किताल का उदघोष किया जाना चाहिए ।

टब जब कुफ्र करने वालों से तुम्हारी मुठभेड़ हो तो गरदनें मारना , यहां तक कि जब तुम उन्हें कुचल चुको , तों उन्हें बंधनों में जकड़ो, फिर बाद में में या तो एहसान कर देना है या फिदाया लेना यहां तक कि लड़ाई अपने हथियार रख दे । यह बात अलग रही कि यदि अल्लाह चाहता होता तो उनसे बदला ले लेता परन्तु उसे तुम्हारी एक दूसरे के द्वारा परीक्षा करनी थी । और जो लोग अल्लाह के मार्ग में मारे गए, वह उनके कर्मों को कदापि अकारथ नहीं करेगा । (आयत किताल 47:4)

व्ह मुसलमानों को चेतावनी देते है ि कइस समय पुलिस और के ऊपर पत्थर फेंके जाएंगे तो उसके बदले में गोली चलेगी । इससे मुसलमानों को हानि ही पहुचेंगी । इसके विपरीत उन्हें इस शांति काल का उपयोग हुदैब्इया संधि काल की भांति कूटनीति द्वारा राजनैतिक प्रभुत्व प्राप्त करने और साथ साथ इस्लाम के प्रचार के लिए करना चाहिए । जिससे पर्याप्त शक्ति संचित हो जाए और फिर मक्का की भांति पूरे भारत को इस्लाम के लिए विजय किया जा सके ।